Chap-4

चतुर्थ अध्याय

साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राष्ट्रीय चेतना

साहित्य की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा उपन्यास है। जीवन और जगत की व्यापक प्रतिछाया जितनी उपन्यास में चित्रित हो पाती है, [1] उतनी अन्य विधाओं में नहीं। 'उपन्यास' पूर्णतः आधुनिक युग की देन है। अल्प समय में वह मानव जीवन के इतने व्यापक स्तर पर फैला है कि सामान्य कथ्य या घटना से लेकर गहनतम विषय दर्शन तक को अपने में समेटने में समर्थ हो गया है। इतना ही नहीं अपितु उपन्यास की परिधि में मनुष्य का चेतन, अर्धचेतन अथवा अचेतन जगत भी सिमट गया है। [2] अतः कहा जा सकता है उपन्यास मनुष्य के समूचे अविभाज्य जीवन का कलात्मक एवं सशक्त रूप है।

गद्य-साहित्य में उपन्यास की महत्ता को स्वीकार करते हुए भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने उपन्यास के विभिन्न पहलुओ को ध्यान में रखकर तत्सम्बन्धी अपने मंतव्य प्रस्तुत किये है। आ० रामचन्द्र शुक्ल ने उपन्यास की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि - " मानव-जीवन के अनेक रूपों का परिचय कराना उपन्यास का काम है। यह उन सूक्ष्म घटनाओं को प्रत्यक्ष करने का प्रयत्न करता है जिनसे मनुष्य का जीवन बनता है और जो इतिहास आदि की पहुँच के बाहर है।"[3] राल्फ फाक्स के विचारानुसार -'मानव-जीवन की सर्वागींण अभिव्यक्ति उपन्यासों में ही संभव है। उपन्यास केवल गद्य में लिखी हुई कथा ही नहीं है। उसने उपन्यास को मानव जीवन का गद्य माना है। [4] प्रसिद्ध उपन्यासकार प्रेमचंद के मतानुसार उपन्यास मानव-चरित्र का चित्र मात्र है । जबकि बाबू श्यामसुन्दरदास के अनुसार ' उपन्यास मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है।[5] इस प्रकार स्पष्ट है कि उपन्यास में कल्पित कथा और पात्र द्वारा जीवन के एकांगी या बहुरंगी यथार्थ को अंकित किया जाता है।

हिन्दी साहित्य जगत में उपन्यास का प्रारम्भ १९वीं शताब्दी से हुआ है। आरम्भिक अवस्था में मनोरंजक एवं सामाजिक शिक्षाप्रद उपन्यास लिखे गये। यह युग वास्तव में तिलस्मी, ऐय्यारी एवं जासूसी उपन्यासो का था। [6] उपन्यास के क्षेत्र में मुंशी प्रेमचन्द जी का आगमन एक नये युग का प्रारम्भ है। उन्होंने भारतीय जन-जीवन, परिवेश और वास्तविकता को नजदीकी से देखा, भोगा और उन्हें अपनी

रचनाओं में उतारा। उन्होनें दैनिक जीवन की छोटे-छोटे घटना-प्रसंगो के माध्यम से बड़ी-बड़ी सामाजिक,राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं को सुलझाया। डॉ० रामविलास का यह कहना सत्य ही है कि 'प्रेमचन्द जी का साहित्य बीसवीं सदी के हिन्दुस्तान का सच्चा साहित्य है। '[7]

प्रेमचंदोत्तर युग के उपन्यासों में राष्ट्रीय समस्याओं को नवीन रूप में विस्तार के साथ प्रस्तुत किया गया । स्वतंत्रता के पश्चात देश की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितयों में जो त्वरित परिवर्तन हुए इसके परिणाम स्वरूप उभरे हुए नये भावबोध ने उपन्यास को व्यापक क्षेत्र प्रदान किया । सन् १९५० के पश्चात् के युग में नये वैज्ञानिक चिन्तन के परिप्रेक्ष्य में व्यक्तिवाद का विकास हुआ। परिणामस्वरूप स्त्री-पुरूष में पारस्परिक स्पर्द्धा जागृत हुई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश में मुक्ति की नयी हवाएँ बहने लगी और निर्माण के नये नारों की अनुगूंजे सुनाई पड़ने लगी। सत्ता के सूत्र जन-प्रतिनिधियों के हाथों में देखकर, जन-मानस में सहज ही यह विश्वास पैदा हो गया था कि अब अभाव, शोषण, दुःख और दबावों की अंधियारी व्यतीत हो गई और शीघ्र ही सुख के सुनहरे सूरज के दर्शन होंगे। शासकीय स्तर पर एक ऐसे शोषणविहीन समाज का स्वरूप रखा गया, जिसमें समाज के प्रत्येक मनुष्य को अपनी उन्नति और विकास के समान अवसर प्राप्त होंगे, किन्तु जनता का यह मोह शीघ्र ही भंग हो गया। देश को नई दिशा देने का दायित्व जिन पर था वे आत्म-केन्द्रित, भ्रष्ट और राजनीतिक दलबन्दी में उलझकर रह गए। पंचवर्षीय योजनाओं की विफलता, बढ़ती हुई बेकारी, स्वार्थपरता और संकीर्णतावादी मनोवृत्तियों से ऐसे परिणाम सामने आए जिसके कारण भारतीय प्रजातन्त्र का चेहरा अनेक तरह की विकृतियों से भर गया। देश में सर्वत्र अवसरवाद, भ्रष्टाचार, मूल्यहीनता और नैतिक पतन के कुरूप चित्र दिखाई देने लगे। घिनौनी राजनीति की धुन देश के सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन को खोखला और सत्वहीन कर रही थी। देश की जनता ने गाँधी के ग्राम-राज्य और राम-राज्य की कल्पना को साकार होने के जो स्वप्न देखे थे वे राजनीति की सड़ांध और क्षुद्रता के कारण निराशा और अवसाद में घिर गए। लक्ष्यहीन शिक्षा-पद्धति, सांस्कृतिक

जीवन-मूल्यों में आयी गिरावट,अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव परिणामस्वरूप पाश्चात्य संस्कृति का आकर्षण आदि ने जन-जीवन में अनास्था और कृत्रिमता को भर दिया। परिणामस्वरूप 'समकालीन युग' के उपन्यासों में मानव हृदय की निराशा, कुण्ठा, टूटन, यौन-पीड़न, तज्जन्य स्वप्न तथा प्रतीकात्मकता का स्वर अधिक मुखर हुआ। प्रेमचन्द जी के बाद हिन्दी उपन्यास साहित्य प्रधानतया दो भिन्न धाराओं को लेकर आगे बढ़ा। एक धारा सामाजिक उपन्यासों की है जिसमें समाजवादी तथा यथार्थवादी उपन्यासों की गणना की जाती है तथा दूसरी धारा मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की है जिनका सम्बन्ध वस्तुतः मानव-मन में छिपे रहस्यों को उद्घाटित करना है। साठोत्तरी उपन्यास भारतीय जीवन पर हुए स्वातंत्र्योत्तरकालीन प्रजातान्त्रिक प्रभावों का उद्गाता या संवाहक है। उपन्यास के इस युग में नयी भूमिका का अन्वेषण हुआ, नये प्रयोग किये और नयी दिशाओं में कदम बढ़ाये।यह काल उपन्यासों के शिल्पगत विकास का काल है।

हिन्दी के साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों की संख्या अत्यधिक है जिनमें समकालीन युगीन परिवेश के विविध पक्षों को उद्घाटित किया है। प्रस्तुत शोध विषय के लिए लगभग सत्ताईस उपन्यास हमारे अध्ययन क्षेत्र की परिधि में रखे जा सकते हैं जिनमें भारत की स्वाधीनता के पचास वर्षो में उभरी राष्ट्रव्यापी अनेक समस्याओं को उजागर किया गया है,जिनका विवेचन आगे के पृष्ठों में वर्णित है । इन समस्याओं के माध्यम से राष्ट्रीय-जीवन के विभिन्न पहलूओं पर प्रकाश डाला जा सकता हैं --

१) राजनीतिक चेतना ---

i कितने चौराहें -- फणीश्वरनाथ रेणु ---

'कितने चौराहें 'फणीश्वरनाथ रेणुजी का अंतिम उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु सन् १९४२ ई०में देश की स्वतंत्रता के लिए जनता को गाँधीजी द्वारा दिये गए आह्वान पर आधारित है। पूज्य बापू ने अंग्रेजों को देश छोड़ने के लिए मजबूर हो जानेवाली परिस्थितियों के निर्माण हेतु लोगों को एक सूत्र दिया था 'करो या मरो' ।पूज्य बापूजी की प्रेरणा से वयस्क लोग ही नहीं अपितु स्कूल - कॉलेज में पढ़ने वाले नवयुवा विधार्थी भी अपना बलिदान देने के लिए तैयार हो गये थे। नवयुवानों द्वारा चलाई गई गतिविधियों ने पूज्य बापू के स्वातन्त्र्य आन्दोलन को सफल बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था।

उपन्यास की कथावस्तु देश के स्वतन्त्रता-आन्दोलन में विद्यार्थियों के बलिदान से सम्बन्धित है। उपन्यास का नायक मनमोहन बड़ा तेजस्वी विद्यार्थी था। अपने अभ्यास के दरम्यान वह परीक्षा में पूरे जिले मे सर्वप्रथम आया था। जिसके परिणामस्वरूप उसे सरकारी शिष्यवृत्ति मिली थी। शिक्षा की असुविधा के कारण वह अररिया में अपने रिश्तेदार के यहाँ रहकर उच्चशिक्षण का अभ्यास करता है। घर के प्रतिकुल परिवेश में रहते हुए भी वह अपने अभ्यास के प्रति समर्पित था।स्कूल में उसकी मुलाकात प्रियोदा नामक एक विद्यार्थी से होती है जो अभ्यास के साथ-साथ राजनीतिक गतिविधियों में भी सक्रिय था। प्रियोदा के प्रभाव से मनमोहन भी राजनीतिक कार्यों मे सक्रिय रूप से जुड़ जाता है। अंग्रेजों के द्वारा गाँधी जी को बन्दी बनाए जाने पर प्रियोदा ने हड़ताल करवाई।मनमोहन सरकारी शिष्यवृत्ति की परवाह किये बिना प्रियोदा के कार्य में हाथ बॅटाने लगता है। इसी बीच उसकी मुलाकात बड़े महाराज से होती है। बड़े महाराज विद्यार्थियो को समकालीन राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियों का यथार्थ परिचय देने वाले मार्गदर्शक थे।

'भारत छोडो आन्दोलन' के आरम्भ होने पर प्रियोदा अपने साथियों का हौंसला बढ़ाते हुए कहता है" बात रोने की नहीं हँसने की है। अब देरी नहीं, स्वराज्य करीब आ रहा है, धीरे-धीरे और भी मरेंगे ! मारे जायेंगे ।"[8]

एक दिन रात के अन्धेरें में कोई स्कूल के खुले मैदान में त्रिरंगा झण्डा फहरा देता है। दूसरे दिन प्रिंसिपल, मनमोहन और प्रियोदा आदि की ओर शंका रखते हुए

उन्हें स्कूल से निकाल देने की धमकी देते हैं। मनमोहन प्रत्युत्तर में बड़ी निर्भयता से कहता है कि " सर, हम चोरी छिपे कुछ नहीं करेंगे। जिस दिन झण्डा फहराना होगा खुले आम विधिपूर्वक फहराएँगे।"[9]

'भारत छोड़ो आन्दोलन' के एक हिस्से के रूप में विधार्थियों द्वारा ट्रेजरी पर त्रिरंगा झण्ड़ा फहराने का आयोजन किया जाता है। विधार्थियों को रोकने के लिए पुलिस गोली चलाती है।गोली का पहला शिकार प्रियोदा होता है। प्रियोदा के हाथ से बारी-बारी से विद्यार्थी झण्ड़े की रक्षा करते हुए पुलिस की गोलियों का शिकार बनते हैं। अंत में एक विद्यार्थी शहीद होने से पूर्व झण्ड़े को ट्रेजरी पर फहरा देता है। इसी बीच मनमोहन किसी कारण से बच जाता है। लेकिन उसका मन अत्यंत दुखी और वैरागी हो जाता है। वह अपना शेष जीवन स्वामी सच्चिदानन्द के रूप में व्यतीत करता है। इस दरम्यान भी वह राष्ट्र की भावी पीढ़ी के मन में देश-प्रेम के संस्कार सीचंन करता है। इस प्रकार मनमोहन का समस्त जीवन देश सेवा के लिए समर्पित रहता है ।

'कितने चौराहें' उपन्यास में निरूपित चेतना ---

'फणीश्वरनाथ रेणु जी' ने अपने उपन्यास 'कितने चौराहे' में मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने वाले किशोरों की वीर-गाथा प्रस्तुत की है। डॉ० चन्द्रभानु सोनवणे के शब्दो में -"कितने चोराहें' राष्ट्रीय गीत का उपन्यास रूप है। गीत के समान ही यह संक्षिप्त है और उत्तरोत्तर सांद्र से साँद्रतर होती चली गई भावना की अभिव्यंजना है।राष्ट्रीयता की इस भावना में कहीं भी धृणा, विद्वेष, प्रतिशोध आदि का लवलेश नहीं है।इसमें 'माखनलाल चतुर्वेदी' की 'एक फूल की चाह' कविता की तरह बलिदान की भावना अनुस्यूत है।"[10] समकालीन परिवेश के प्रभाव से युवकों में राष्ट्र-प्रेम की भावना इतनी तीव्रता से घर कर गयी थी कि वे देश की सेवा में अपने जीवन का बलिदान देने के लिए तैयार थे। गाँधीजी के नेतृत्व में स्वतन्त्रता आन्दोलन से प्रेरित होकर इन किशोरावस्था के स्कूली छात्रों ने अपने आपको देश की सेवा में समर्पित कर दिया था। भारतीय युवानों के देशप्रेम और बलिदान की गौरव-गाथा गानेवाला यह उपन्यास है। देश के वीर-जवानों के देशप्रेम का गौरव-गान का यहाँ यत्न किया गया है। उपन्यास की कथावस्तु को राजनैतिक परिवेश देकर उसे ऐतिहासिक रूप प्रदान किया गया है।अररिया की ट्रेजरी पर झंडा फहराते समय मनमोहन के सभी साथी-विद्यार्थी देश के

लिए शहिद हो जाते हैं।मनमोहन किसी कारण वश शहिद नहीं हो पाता।लेकिन इस बात का उसे बड़ा अफसोस रहता है। अत: आन्दोलन के पश्चात् भी मनमोहन अपना शेष जीवन देश की सेवा और नयी पीढ़ी के निर्माण में समर्पित करता है ।

प्रस्तुत उपन्यास में युवकों में ही नहीं नारियों में भी देश प्रेम की तीव्र भावना विद्यमान दिखाई देती है।गॉधीजी की गिरफ्तारी पर शरबतिया और नीलिमा'वन्देमातरम्' का गान करके युवकों में नया जोश भरती हैं ।

मनमोहन,प्रियोदा आदि चरित्रों के माध्यम से रेणु जी यह प्रेरणा देना चाहते हैं कि संकट आने पर प्रत्येक छात्र को विद्यार्थी-अवस्था से ही देश की राजनीतिक गतिविधियों से परिचित होना चाहिए और राष्ट्र की सेवा के लिए यथोचित योगदान देने के लिए हमेशा तत्पर रहना चाहिए। जबकि आज हम देखते हैं कि आज का विद्यार्थी राष्ट्र की सेवा के बदले राजकीय पक्षों से सम्बन्ध स्थापित कर अपने लाभ की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील हैं ।

लेखक ने कथावस्तु में अलग-अलग धर्म के माननेवाले किशोरों को स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए संगठित एवं सामुहिक रूप से प्रयत्नशील दिखाया है। जिसके परिणामस्वरूप उन्हें अपने उद्देश्य के प्रति सफल होते हुए भी दर्शाया गया है।इसी प्रकार आज के नव-युवकों को भी इस कथानक के द्वारा यह सन्देश प्राप्त होता है कि देश की अखण्डता और एकता के लिए हम सब को अपने धर्म, जाति, वर्ग और समाज के भेद को भुलाकर सामुहिक एवं संगठित बने रहना होगा ।

इस उपन्यास में किशोरों के माध्यम से रेणु जी ने प्रत्येक भारतीय के मन में देश-प्रेम की भावना को प्रेरित करने का सफल प्रयास किया है। स्वतन्त्रता के बाद इस उपन्यास को लिखने का उद्देश्य देश की जनता को परस्पर संगठित एवं राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत रखना है। तभी हम देश के इन लाखों, करोड़ों, बलिदानियों एवं शहीदों को सच्ची श्रद्धाजंलि अर्पित कर सकेगें। डॉ० चन्द्रभानु सोनवणे के शब्दों में "देश का काम करने की भावना को किशोरों के मन में दृढ़मूल करने के लिए 'कितने चौराहें 'लिखा गया है।"[11]

रेणु जी ने उपन्यास की अन्तिम घटना के आधारपर यह सन्देश दिया है कि देश की सेवा केवल शहीद होकर या देश के लिए अपने प्राण देकर या राजनीतिक कार्यों में संलग्न रहकर ही नहीं कर सकते, बल्कि सामाजिक-उत्थान के कार्यों में अपना

योगदान देकर भी राष्ट्र की सेवा की जा सकती है।स्वतन्त्रता आंदोलन में भाग लेने वाले आज भी जो व्यक्ति विद्यमान हैं,उनमें से अधिकांश अपनी सेवा का मूल्य प्राप्त करने के लिए तत्पर हैं।लेखक ने स्वामी सच्चिदानन्द के चरित्र द्वारा देश सेवा करने वाले लोगों को मार्गदर्शन दिया है।इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास राजनैतिक फलक पर राष्ट्रीय प्रेम का उत्कृष्ट निरूपण करता है। आज का नव-युवान आधुनिकता के मोह में पाश्चात्य रहन-सहन के अन्धानुकरण में इतना लीन है कि देश की गंभीर परिस्थितियों एवं समस्याओं से मानो उसे कोई सरोकार ही नहीं है। ऐसे नवयुवानों को मार्गदर्शन देनेवाला प्रस्तुत उपन्यास है। रेणुजी ने देश की स्वतंत्रता-प्राप्ति के लिए करोड़ों नवयुवानों के बलिदान की वीरगाथा वर्णित की है ।

उन शहीदों के देशप्रेम और बलिदान का स्मरण करके हम मातृभूमि की रक्षा के लिए कृतनिश्चयी एवं संकल्पबद्ध बने यही इसका संदेश है।इस प्रकार लेखक ने भारतीय जनता को अपनी स्वतंत्रता के लिए दिये गये अनगिनत बलिदान की याद दिला कर प्राप्त स्वतंत्रता की सुरक्षा के लिए सतर्क रहने का संकेत किया है। देशप्रेम और राष्ट्रभक्ति से यह ओतप्रोत है ।

ii तमस - डॉ० भीष्म साहनी

'तमस' भीष्म सहानी जी का बहुचर्चित उपन्यास है। अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त होने के साथ-साथ देश की जनता ने साम्प्रदायिक दंगों की विभिषिका का जो दर्द सहा है उसका मार्मिक चित्रण इस उपन्यास की प्रमुख विशेषता है। लेखक ने साम्प्रदायिक कट्टरता से उत्पन्न आम जनता की पीड़ा और परेशानियों का सजीव चित्रण किया है ।

'तमस' की कथावस्तु पंजाब की सर-जमीन पर चित्रित है जो देश के विभाजक रेखा के निकटवर्ती प्रदेश के रूप में सर्वाधिक प्रभावशाली स्थान रहा है। उपन्यास के आरम्भ में हिन्दू-मुसलमानों के आपसी मेल-मिलाप को मिटाकर उनमें साम्प्रदायिक कट्टरता फैलाने के उद्देश्य से मुराद अली, नत्थू द्वारा एक सुअर को मरवाकर मस्जिद की सीढ़ीयों में फेंकवा देता है। परिणामस्वरूप हिन्दू-मुसलमानों के बीच नफ़रत की एक ऐसी विनाशक आग फैलती है जो सबके मन में मौत की दहशत भर देती है। आम जनता के बीच फैले इन दंगो की विभीषिका को देखकर ततकालीन राजनैतिक पार्टियॉ-जैसे क्रॉंग्रेस

आदि,अंग्रेजी सरकार के प्रतिनिधि डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड से सहायता माँगने जाते हैं। रिचर्ड की पत्नी लीज़ा भी जनता की दुर्दशा को देखकर करूणा से रिचर्ड को कुछ करने के लिए कहती है।स्वार्थी अंग्रेजों के मन में इस देश की जनता के लिए जो भावनाएँ थीं उसका प्रतिबिम्ब रिचर्ड के इन शब्दों से जाना जा सकता है "क्या यह अच्छी बात होगी कि ये लोग आपस में मिलकर मेरे खिलाफ लड़े, मेरा खून करें ? "[12]

अराजकता फैलानेवाली इस घटना का दुष्प्रभाव आस-पास के गाँव में भी पड़ता है।पंजाब के एक देहात में हरनाम सिंह और बन्तो होटल चलाकर अपना जीवन निर्वाह कर रहे थे। करीम ख़ान उन दोनों को जान बचाने की सलाह देते हुए वहाँ से भाग जाने के लिए कहता है।अपना धन्धा ज्यों का त्यों छोड़कर दोनों भाग निकलते हैं। सुबह जिस गाँव में पहुँचते है वह भी मुस्लिम गॉव'ठोकमुरीदपुर'है।वहाँ उन्हें एक मुस्लिम स्त्री के यहाँ पनाह लेनी पड़ती है। जबकि वह मुस्लिम स्त्री जानती है कि उसका पुत्र और पति धार्मिक संकीर्णता और कट्टरता से हिन्दूओं की हत्या कर रहे हैं।पुत्र को पता चलने पर वह इन दोनों की हत्या करने के लिए आगे बढ़ता है, परन्तु रूक जाता है क्योंकि सोचता है " काफिरों को मारना और बात है,अपने घर के अन्दर केजान-पहचान के पनाहगनीज को मारना दूसरी बात।"[13] रात के अंधेरे में वह मुस्लिम स्त्री इन दोनों शरणागतों को गाँव के दूसरे छोर तक सुरक्षित छोड़ आती है ।

हरनाम सिंह और बन्तों की जान तो बच जाती है,लेकिन वे चिन्तित हैं अपने पुत्र इकबाल सिंह और पुत्री जसबीर के लिए। बलवाईयों द्वारा पकड़े जाने पर इकबाल अपने प्राणों की रक्षा,मुस्लिम बनकर कर लेता है और जसबीर गुरूद्वारे में शरण ले लेती है। कई दिन तक यह साम्प्रदायिक युद्ध चलता रहा। अनेक निर्दोष लोग बेघर हुए,कई लोगों ने अपने प्राण गँवाए।पाँचवे दिन आकाश में हवाई जहाज़ घूमते हुए दिखाई देते हैं। शहर का माहौल धीरे-धीरे बदलने लगता है जहॉ नफ़रत की आग फैली थी वहाँ सरकार कर्फ्यू लगा देती है। इन सांप्रदायिक दंगो में बेघर हुए लोगों के लिए रफ्यूजी कैम्प लगाये जाते हैं। लेकिन मौत के भय से लोग अभी भी मुक्त नहीं हैं ।

अमन-कमेटी रची गई,जो सारे शहर में हिन्दू-मुस्लिम एकता के नारे लगा कर शांति स्थापित करने का यत्न करती है।आश्चर्य की बात यह थी कि कमेटी में सबसे आगे वही मुराद अली बैठा था जिसने इस सांप्रदायिक दंगो को भड़काने में अहम् भूमिका निभायी थी ।

भीष्म साहनी जी ने अपने इस उपन्यास में लोगों को परस्पर लड़ाने वाली धार्मिक कट्टरता और असहिष्णुता के व्यापक दुष्परिणामों को अंकित किया है। देश के कतिपय स्वार्थी लोग अराजक परिस्थितियों का निर्माण करके अपना स्वार्थ सिद्ध कर लेते हैं।देश की जनता ऐसे लोगों को जान ले और सद्भावपूर्ण भाईचारे से मिल-जुलकर देश की आज़ादी और शांति बनाये रखने में अपना योगदान दें। साम्प्रदायिक बैर-भाव न आम जनता के लिए हितकर है और न देश के लिए कल्याणकारी ।

'तमस' उपन्यास में निरूपित चेतना :--

अंग्रेजो के शासनकाल में देश की आमजनता में परस्पर साम्प्रदायिक कटुता का विस्तार अंग्रेजो की कूट-नीति से हुआ था।भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में बढ़ते हुए जनता के जोश को देखकर अंग्रेजी सरकार चिन्तित हो उठी थी।अपने शासन को भारत में बनाये रखने और जनता की बढ़ती हुई शक्ति को कमज़ोर बनाने के उद्देश्य से उन्होंने 'फूट डालो और शासन करो'की नीति अपनायी थी। जिसके परिणामस्वरूप हिन्दू और मुसलमानों में साम्प्रदायिक संकीर्णता और कट्टरता ने आपसी सद्भाव और भाईचारे की भावना को मिटाकर दोनों को एक दूसरे का जानी दुश्मन बना दिया।राजनीतिक लाभ के उद्देश्य से फैलाये गये साम्प्रदायिक दंगो का कितना भयंकर परिणाम हो सकता है इसका सजीव चित्रण हमें भीष्म सहानी जी के उपन्यास 'तमस'में देखने को मिलता है। "लेखक ने सदियों पुरानी भारतीय संस्कृति को कलंकित करके सामाजिकता और मानवता को नष्ट करने वाले विनाशकारी साम्प्रदायिक दंगो की भीषणता के सजीव एवं मार्मिक चित्र 'तमस' में प्रस्तुत किये हैं।"[14]दो सौ साल पुरानी अपनी सत्ता को भारत में बनाये रखने के उद्देश्य से हिन्दू-मुस्लिमों के साम्प्रदायिक दंगो से जन-शक्ति को कमजोर बनाने में अंग्रेजों की भूमिका अहम रही है।भीष्म जी का उद्देश्य केवल उस समय के लोगों की दर्द भरी कहानी कहना मात्र नहीं है,अपितु आतंक के उस माहौल को अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए पुनःनिर्मित करनेवाले आज के स्वार्थी लोगों से जनता को सचेत करना भी है।'[15]

अंग्रेजी सरकार यह भली भाँति जानती थी कि यदि हिन्दू और मुसलमान एक हो गए तो अंग्रेजी-शासन का यहाँ पर टिक पाना मुश्किल ही नहीं असम्भव हो जाएगा। उपन्यास में 'डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड' अपनी पत्नी लीज़ा से कहता है कि"यदि यह दोनों वर्ग आपस में नहीं लड़ेंगे तो ये लोग हमारे खिलाफ लड़ना शुरू कर देगें।"[16] रिचर्ड के

इन शब्दों से अंग्रेजी सरकार की भयमिश्रित 'डिवाइड एण्ड रूल' की नीति स्पष्ट हो जाती है। इसलिए रिचर्ड, हालात को खराब होता हुआ देखकर भी,न तो डिप्टी कमिश्नर के नाते अपनी जिम्मेदारियों का निर्वाह करता है और न ही मानवता के नाते दंगो को समाप्त करवाने का प्रयत्न करता है ।

देश की आजादी के बाद बिन-साम्प्रदायिकता का दम भरने वाली हमारी राजनीतिक पार्टीयाँ भी ऐसी कूट नीति को अपना रही है।राजकीय पक्षों के लोग जनमानस में जाति, धर्म, भाषा और प्रादेशिकता के नाम पर आपसी वैमनस्य और द्वेष की भावना उत्पन्न कर अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं।इसका निकटवर्ती ज्वलन्त उदाहरण ६दिसम्बर १९९२के दिन तोड़ी गई बाबरी मस्जिद की घटना को कहा जा सकता है।इस घटना के पश्चात् देश के अलग-अलग राज्यों में आगजनी और छुरेबाजी की जो व्यापक हिंसात्मक घटनाँए घटीं,इनमें सर्वाधिक मुसिबतें और कष्ट आम जनता ने सहे हैं।इस धार्मिक-संघर्ष की आग में राजनीतिक पार्टियों ने तो अपनी रोटियाँ सेकने का यत्न ही किया है। अत: स्पष्ट है कि आज भी राजनैतिक लाभ के लिए जनता में घर्म को आधार बनाकर आपसी साम्प्रदायिक संघर्ष की स्थिति निर्मित की जाती है।श्री रमेश उपाध्याय जी ने ऐसे धार्मिक कट्टरता और साम्प्रदायिक असहिष्णुता के मूल में जनता के अज्ञान और अंधविश्वासों को प्रमुख माना है।"[17]जनता अज्ञानता वश धर्म के बाहरी तत्वों को अत्यधिक महत्त्व देकर आपस में लड़ उठती है जिससे मानवता का ही संहार होता है ।

'तमस' उपन्यास में लेखक ने अतीत की उस करूण घटना का सजीव चित्रण किया है, जिसमें धर्मान्धता के नाम पर मानवता विहीन नरसंहार का तांडव खेला गया। लेखक का उद्देश्य देश के उस इतिहास के काले पृष्ठो को पुन: जीवित करना मात्र नही है, लेकिन वर्तमान युग में देश और राष्ट्र को कमज़ोर बनाने वाले ऐसे धार्मिक-संघर्ष को रोकना है जो अज्ञान और अंधविश्वासों से निर्मित होकर जनता को सुख, अमन और उन्नति के रास्ते से गुमराह करता है,मानवता के उज्जवल इतिहास एवं हमारी सांस्कृतिक विरासत को भी यह कलंकित करता है।"अज्ञान और अंधविश्वासों पर आधारित धर्म की आड़ में चलाई जाने वाली राजनीति राष्ट्र का अहित करती है क्योंकि वह लोगों को विभाजित करके कमज़ोर बना देती है और व्यवस्था इस कमज़ोरी का फायदा उठाती है।"[18] आज भी कूटनीति से साम्प्रदायिक संकीर्णता का विष घोलकर जनता में आपसी फूट डालकर, देश के बिन साम्प्रदायिक वातावरण को दूषित करके स्वार्थी लोग राष्ट्रीय एकता, आपसी सद्भाव एवं देश के नवनिर्माण में अवरोध उपस्थित किया जा रहा है।

इस प्रकार 'तमस' अतीत की त्रासदी,पीड़ा और विनाशकारी घटनाओं के संस्मरण द्वारा जनता को सदैव मार्गदर्शन करता रहेगा कि सांप्रदायिक कट्टरता राष्ट्र के अमन-चैन को नष्ट करनेवाले विनाशक तत्त्व हैं। अत: जनता उससे बचकर रहे।

iii छाकों की वापसी - वदी उज्जमा

वदीउज्जमा का यह उपन्यास देश के विभाजन से उत्पन्न अराजक परिस्थितियों के परिवेश में निरीह जनता के दु:ख,दर्द और पीड़ा को निरूपित करने वाला एक लघु उपन्यास है।धार्मिक कट्टरता और धर्मान्धता, देश में सांप्रदायिक दंगे-फसादों को जन्म देती है। इससे उत्पन्न त्रासदी और विभिषिका में सर्वाधिक नुकसान सहती है बिचारी जनता। लेखक ने यहाँ देश की स्वार्थी और भ्रष्ट राजनीति से उत्पन्न लोगों की दयनीय दशा का मार्मिक चित्रण किया है। उपन्यास की कथावस्तु से स्पष्ट है कि सांप्रदायिक दंगों और फसादों के मूल में राजव्यवस्था की कूटनीति ही सक्रिय होती हैं।"[19] लेखक ने 'छाकों की वापसी' उपन्यास की कथावस्तु के द्वारा अपने ही घर में बेगाने और पराये की तरह आपदायें सहते सहते मरते हुए व्यक्तियों की दुर्दशा का चित्रण किया है।[20]लेखक ने प्रमुख रूप से मुसलमानों के आँचलिक जीवन की सहज अभिव्यक्ति इसमें की है।[21]

'छाकों की वापसी' उपन्यास में निरूपित चेतना --

वदीउज्जमा के प्रस्तुत उपन्यास में भी सांप्रदायिक दंगो और फसादों के दुष्परिणामों का व्यापक चित्रण किया है।फसादों का कारण चाहे राजनीतिक,सामाजिक, आर्थिक या धार्मिक हो, लेकिन इन दुष्परिणामों को भोगती हुई पीड़ित होती है निरीह जनता।अराजकता, भय तथा त्रासदी के प्रतिकूल परिस्थितियों का भाग बनती है निर्दोष जनता।लेखक ने लोगों की पीड़ा,दु:ख, दर्द, कष्ट, तकलीफों एवं उनकी दयनीय स्थिति का चित्रण करके राष्ट्र विरोधी कार्य करनेवाले देश के शत्रुओं के प्रति लोगों का ध्यान आकर्षित किया है।राजनीतिक गतिविधियाँ और नीतियों का सीधा सम्बन्ध जनजीवन से है।अत: जनता की पीड़ा,चिंता तथा अभावग्रस्त परिस्थितियों से उत्पन्न कष्ट के जिम्मेदार देश का राजतंत्र ही कहा जा सकता है। राजनीतिक पक्ष अपने स्वार्थ-पूर्ति के लिए धर्म का सहारा लेकर आपसी फूट और हिंसा का भयानक वातावरण निर्मित करते हैं।

iv लौटे हुए मुसाफिर - कमलेश्वर

देश के विभाजन को लेकर लिखा गया कमलेश्वर जी कृत 'लौटे हुए मुसाफिर'एक लघु उपन्यास है।लेखक ने इस उपन्यास में विभाजन के पूर्व, विभाजन के समय और विभाजन के पश्चात् की परिस्थितियों का चित्रण बड़े प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है ।

उपन्यास के प्रारम्भ में ही लेखक हमें भूतकाल में लें जाता है। इस बस्ती के हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के साथ मिल जुलकर रहा करते थे।हिन्दू,मुसलमानों के त्यौहारों को तथा मुसलमान,हिन्दूओं के त्यौहारों को श्रद्धा और आनन्द से मनाते थे। इस बस्ती के लोगों में सामाजिक एकता और सांस्कृतिक समन्वय का उत्कृष्ट रूप देखा जा सकता है।परस्पर प्रेम,सहकार और सद्भाव ही हमारी राष्ट्रीय विरासत है।इस बस्ती में विधवा नसीबन रहती है,जो छोटे-छोटे काम-धन्धे करके अपने बच्चों का पालन-पोषण करती है।साथ ही वह बच्चन के छोटे-छोटे बच्चों को,जो माँ के प्यार से वंचित थे, माँ का प्यार देती है। इफ्तिकार भाई भी तांगा चलाकर अपना गुजारा करते हैं। इतना ही नहीं, बस्ती का हर व्यक्ति अपनी मस्ती और रंग में रंगा हुआ है। तात्पर्य यह है कि बस्ती के लोग संपन्न और अमीर नहीं हैं। लेकिन दिल की दौलत से वे मालामाल हैं। एक दिन अलीगढ़ से मकसूद और यासिन इस बस्ती में आते हैं और देखते हैं कि इस बस्ती के लोग देश की राजनीतिक गतिविधियों से अपरिचित हैं। वे दोनों अज्ञात स्वार्थ से धर्म के नाम पर इन लोगों में सांप्रदायिकता की आग को भड़काना आरंभ करते हैं । वे मुसलमानो को बताते हैं कि उन्हें एक नया मुल्क मिल रहा है।देखते ही देखते मंदिरों और मस्जिदों में दोनों सांप्रदायों के लोगों की अलग-अलग बैठकें शुरू हो जाती हैं। मुस्लिम लोगों के मन में हिन्दूओं के प्रति नफ़रत की आगफैलायी जाने लगती है और हिन्दुओं के ह्दय में मुसलमानो के प्रति नफ़रत।साम्प्रदायिक नफ़रत के कारण लोगों का विश्वास एक दूसरे पर से उठ जाता है। इफ्तिकार को स्टेशन से तांगे की सवारियाँ नहीं मिलती हैं तब वह कहता है "अरे पूछो, यहीं पैदा हुआ,यहीं रहा,पला अब लोग मन ही मन मुझ पर शक करते हैं। समझ में नहीं आ रहा यह क्या हो रहा है?"[22]

देश का बँटवारा हो जाने पर बस्ती के मुसलमान पाकिस्तान की ओर जाने लगते हैं।कई लोग बहुत प्रसन्न हैं कि वह अपने मुल्क में जा रहे हैं,किंतु कुछ लोग अपने घरों को छोड़ते हुए दु:खी भी हैं। चिकवों की बस्ती धीरे-धीरे खाली हो जाती है। केवल

नसीबन,साई और इफ्तिकार आदि ही रह जाते हैं।वे बस्ती को ही अपना सब कुछ मानते थे,अतः अपनी मातृभूमि को छोड़ने के लिए तैयार नहीं है ।

कई वर्षों के बाद कुछ नौजवान, वापिस इस बस्ती की ओर आते हैं।इनके माता-पिता कभी इस बस्ती में रहा करते थे। ये लोग अज्ञात कारण से पाकिस्तान नहीं पहुँच पाये और भटकन का जीवन व्यतीत कर वापिस उसी बस्ती में लौट आते हैं। इन सब को वापिस लौटा हुआ देख नसीबन खुशी से रो पड़ी।लौटकर आने वालों में बशीर, बाकर,रमजान फत्ते वगैरह थे जो जवान होकर लौट आये थे। बिछुड़े हुए अपने साथियों को पुनः पाकर नसीबन उन्हें अपने साथ वहॉ ले गयी जहॉ इन सब के बचपन के निशान अब भी बाकी थे। [23]

लेखक ने प्रस्तुत उपन्यास में भारतीय जन-मानस का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है।शान्ति और अमन के वातावरण में सांस्कृतिक समन्वय का जितना उज्जवलरूप दिखाई देता है उतना ही कलुषित रूप धर्मान्धता और सांप्रदायिक संकीर्णता की स्थितियों में दिखाई देता है। मुसाफिरों का वापस लौटना ही इस बात का प्रमाण है कि इस देश की मिट्टी से मनुष्य का अटूट सम्बन्ध है, जहाँ उसके थके हारे हृदय को विश्रांति प्राप्त होती है। यह देश उस माँ की गोद की तरह है, जो अपने सपुत-कपूत दोनों को प्रेम से गले लगाती है । प्रेम की शीतल छाया में मनुष्य-हृदय की सारी भटकन और उससे उत्पन्न परिताप को हरकर, परम शान्ति का अनुभव करवाती है।

'लौटे हुए मुसाफिर' उपन्यास में निरूपित चेतना --

भारत में धर्म के नाम पर अराजकता, हिंसा, भय और आतंक का वातावरण समय-समय पर निर्मित होता रहा।कारण चाहे राजनीतिक,सामाजिक,धार्मिक या आर्थिक रहे हो, लेकिन चतुर और स्वार्थी लोगों ने जनता की धार्मिक श्रद्धा का लाभ उठाकर अपनी-अपनी रोटियाँ सेकीं हैं। इसके दुष्परिणाम भुगते हैं, देश और निरीह जनता ने।

'लौटे हुए मुसाफिर' कमलेश्वर जी का एक विचारप्रेरक लघु उपन्यास है। देश के विभाजन की अशान्त और अराजक परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में एक ऐसी बस्ती का चित्रण किया गया है,जहाँ भारतीय लोकमानस का आदर्श चित्र उभरकर सामने आता है।यह बस्ती प्रतिनिधित्व करती है, देश के विभाजन से पूर्व,सहकार,सद्भाव और शान्ति से मिल मिलकर रहने वाले लोगों की। यद्यपि वे भिन्न धर्म के मानने वाले थे, तथापि

सामाजिक सद्भाव और सांस्कृतिक एकता का आदर्श रूप थे ।

देश में अंग्रेजो के विरोध में स्वतन्त्रता-आन्दोलन जब अपने पूरे जोश से आगे बढ़ता हुआ,सफलता की मंज़िल के करीब ही था,तब एक आँधी उठी। आँधी में एक स्वर गूंज उठा कि देश की स्वतन्त्रता की प्राप्ति का लाभ केवल बहुसंख्यक हिन्दुओं को मिलेगा, अल्पसंख्यक मुस्लिम समाज का भविष्य क्या ? प्रचंड जन-शक्ति को कमज़ोर और खोखला बनाने के लिए अंग्रेजों ने लोगों की धार्मिक भावना को उकसाकर उसका सशक्त हथियार के रूप में प्रयोग किया।परिणामस्वरुप देश का विभाजन हुआ।विभाजन की विभीषिका में लोगों की उत्पीड़न का एक लंबा सीलसिला आज तक चलता आ रहा है।देश के बँटवारे के अभिशाप से केवल एक पीढ़ी नहीं,कई पीढ़ियों तक इसका दुष्प्रभाव बना रहेगा।

प्रस्तुत उपन्यास में शान्त बस्ती को मकसूद और यासिन राजनीतिक परिवेश की आँधी से आन्दोलित कर देते हैं। वे बस्ती के मुस्लिम लोगों को एक अलग मुल्क के सुनहरे स्वप्न दिखाकर, बस्ती छोडने के लिए आकर्षित करते हैं । बस्ती के हिन्दू और मुस्लिम जो आज तक एक दूसरे के साथ मिल जुलकर रहते थे, वे परस्पर नफ़रत की आग में जलने लगे।मन्दिर और मस्जिद में बैठकें शुरू हुई और एक दूसरे के खिलाफ योजनाएँ बनाई जाने लगीं।परिणामस्वरूप अधिकांश मुसलमान अपने बसे-बसाये घरबार को त्यागकर पाकिस्तान जाने के लिए निकल पड़े।इस प्रकार एक शान्त संगठित बस्ती उजड़ गयी।बस्ती का अमन और चैन,नफ़रत और आशंका में परिणत हुआ ।

बस्ती छोड़कर जो लोग पाकिस्तान जाने के लिए निकले थे,उनमें निर्धन मुसलमान किसी कारण से वहाँ तक नहीं पहुँच पाये। वे कई सालों तक बीच मे ही भटकते रहे और यातनाएँ सहते रहे। अर्थ के अभाव में भटके हुए निर्धन मुसलमानों की दूसरी पीढ़ि कुछ साल पश्चात पुन:इस बस्ती में लौट आती है।इस प्रकार लेखक ने देश के बँटवारे से उत्पन्न प्रतिकुल परिस्थितियों मे निरीह लोगों की भटकन, पीड़ा और यातनाओं का चित्रण किया है। इसके साथ उपन्यास के अन्त में लेखक ने अपनी ही मिट्टी के प्रति लोगों की आस्था,कर्तव्यपरायणता और दायित्व के निर्वाह का एक महान संदेश भी दिया है।"[24]

V 'मुट्ठी भर काँकर' -- जगदीश चन्द्र

जगदीश चन्द्र जी ने अपने उपन्यास 'मुट्ठी भर काँकर' में शरणार्थियों की समस्या को चित्रित किया है।विभाजनकी घोषणा के बाद कुछ समय तक शरणार्थी

अपनी इच्छा से किसी भी शहर में आते गये।सरकार ने उनको ठहराने के लिए रिफ्यूजी कैम्प'लगवाये,पर सदा ही अपर्याप्त एवं असुविधाजनक रहे।लेखक ने दिल्ली के पास के एक गाँव'दारापुर'को अपने इस उपन्यास में चित्रित किया है।शरणार्थियों को अपने गाँव की तरफ आता देखकर गॉव वाले भयभीत हो जाते हैं ।

भारत पहुँचने पर शरणार्थियो ने अपनी आजीविका के लिए अनेक पापड़ बेले।किसी भी कार्य को करने में उन्होंने शर्म मेहसूस नहीं की।उनके साहस लगन और मेहनत को देखकर गाँव का दुकानदार दुनीचन्द चिन्तित हो जाता है कि कहीं उसका व्यापार ठप्प न हो जाए। इसी कारण जब पंजाबी सरदार अतरसिंह कपड़े की गठरी लेकर गाँव में बेचने के लिए आता है तो दुनीचन्द उसे गाँव के अन्दर नहीं जाने देता। कुछ दिनों के बाद सरदार अपनी पत्नी अचिन्त कौर को साथ लेकर आता है। दुनीचन्द फिर भी सरदार को गाँव के अंदर जाने की अनुमति नहीं देता है केवल उसकी पत्नी को ही जाने देता है।सरदार गाँव के बाहर ही अपने माल को खोलकर बैठ जाता है। थोड़ी देर के बाद गाँव की अधिकत्तर औरतें दुनीचन्द के पास आ गईं और शिकायत करने लगीं कि तू हमें महेगॉ सामान देता है ।

शरणार्थी रामदयाल ने भी गाँव के बाहर उजाड़ स्थान पर कुएँ के पास चाय और पकौड़े की छोटी सी दुकान खोल डाली। पहले गाँव के कुछ लोगों ने इसका विरोध किया,लेकिन जब गाँव के कुछ लोगों ने रामदयाल की कुछ वस्तुओं से गाँव के दुकानदार दुनीचन्द की वस्तुओं की तुलना करके यह निष्कर्ष निकाला कि शरणार्थी रामदयाल की चीजें अधिक स्वादिष्ट और अच्छी हैं ।

सरदार अतरसिंह ने अब सीसगंज में एक छोटी सी कपड़ों की दुकान खोल ली।गॉव के पहलादसिंह और अन्य लोगों को जब अतरसिंह बाजार में घूमता हुआ देखता है,तो बड़ी इज्ज़त के साथ उन्हें बिठाता है। जब उसे पता चलता है कि ये लोग कपड़ा खरीदने के लिए आये हैं तो वह उन्हें सस्ता और अच्छा कपड़ा कम कीमत पर देता है। वहाँ गाँव के पास रामदयाल की दुकान भी अच्छी चल पड़ती है।

शरणार्थियों को बुरा भला कहने वाला गाँव का दुकानदार दुनीचन्द भी अब इनकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करने लगता है।शरणार्थियों ने स्वंय को इस नये वातावरण में स्थापित करने के लिए अधिक परिश्रम और धैर्य से काम लिया ।

सरकारी सहायता प्राप्त करने के बावजूद भी इन प्रामाणिक और

परिश्रमी शरणार्थियों को पुन:स्थापित होने की सुविधा नहीं मिलती है क्योंकि स्थानीय लोगों के सद्भाव, सहयोग और प्रेम के बिना समाज में इनका एक निश्चित स्थान बना पाना सहज नहीं है।स्थानिक लोगों को इनके द्वारा प्राप्त सस्ती और अच्छी वस्तुएँ तो प्रिय हैं लेकिन उनके लिए कुछ छोड़ने या देने में मन हिचकिचाता है। लेखक ने इसके द्वारा आम मनुष्य की संकीर्ण मनोवृत्ति को उजागर करते हुए मनुष्य-मनुष्य के बीच प्रेम और विश्वास का सेतु बाँधने का यत्न किया है।प्रेम और विश्वास ये दोनों हमारे सांस्कृतिक साधन है जो देश में शांति और प्रजा में एकता बनाये रखता है।

'मुट्ठी भर कंकर' उपन्यास में निरूपित चेतना --

जगदिश चन्द्र जी ने प्रस्तुत उपन्यास में स्वतन्त्रता के बाद उत्पन्न हुई शरणार्थियों की समस्या को चित्रित किया है।अंग्रेजों की कूटनीति के दुष्परिणाम स्वरूप देश का विभाजन हो गया।देश के विभाजन से सबसे बड़ी शरणार्थी समस्या खड़ी हुई। विभाजन की घोषणा के बाद कुछ दिनों तक शरणार्थी अपनी इच्छा से किसी भी शहर में पहुँचते रहे। परंतु दिल्ली के आस-पास पहुँचने वाले शरणार्थिओं की संख्या बहुत अधिक मात्रा में थी।जगदीश चन्द्रजी ने अपने उपन्यास 'मुट्ठी भर कांकर' में विस्थापित शरणार्थियों की समस्याओं को दिखाने का प्रयास किया है।

सरकार ने इन पंजाबी शरणार्थियों के पुनर्वास के लिए दिल्ली के आस-पास के गाँव की जमीनों को एक्वायर करने का निर्णय लिया।यद्यपि इन ग्रामीण लोगों को उचित मुआवजा भी दिया गया परन्तु ये शरणार्थी इन गाँवों में कतिपय अपने घर स्थापित नहीं कर पाते हैं।गाँव के लोग इन्हें घृणा और नफ़रत की नज़रो से देखते थे, इतना ही नहीं इन दुखी शरणार्थियों ने अपने जीवन निर्वाह के लिए जब छोटा-मोटा धन्धा भी करना चाहा तो गाँववालों से पर्याप्त सहयोग भी नहीं मिला ।

लेखक ने उपन्यास का शीर्षक'मुट्ठी भर कांकर'उचित ही रखा है। जिस प्रकार किसी व्यक्ति के मकान के बिखर जाने पर उसके हॉथ में मुट्ठी भर कॉंकर ही लगता है ठीक उसी प्रकार विस्थापन की प्रक्रिया से इन शरणार्थियों के जीवन में बिखराव दुख, दर्द, पीड़ा और सुख की बची यादें ही रह जाती हैं ।

आज भी अतरसिंह,रामदयाल आदि दैसे शरणीर्थी देश के कई भागों मे अपने स्थापित आश्रय के लिए प्रयत्नशील हैं परन्तु इन्हें अभी तक सब सुविधाएँ प्राप्त नहीं हुई हैं। निभाजन के बाद यह समस्या केवल पाकिस्तान से आने वाले निरिश्रितों तक ही सीमित नहीं है बल्कि देश की पूर्वी ओर दक्षिण दिशा के पड़ोसी देशों से भी आनेवाले निराश्रितों की भी विकट समस्या आज भी राष्ट्र के सामने मुँह खोले खड़ी हुई है।

शरणार्थीयों की समस्या केवल सरकार के लिए ही विचारणीय प्रश्न नहीं है अपितु आम जनता के लिए यह जरूरी है कि अपने ही दीन-हीन निराश्रित बन्धुओं को प्रेम, सौहार्द और उदारता से सहायता करें।शरणार्थियों की दयनीय दशा के प्रति लेखक ने समाज का ध्यान आकर्षित किया है। जीवन निर्वाह के लिए मूलभूत आवश्यकताओं जैसे (रोटी, कपड़ा और मकान) को जुटाने में भी उन्हें कड़ा संघर्ष करना पड़ता है। उनके बच्चे शिक्षा से वंचित रह जाते हैं और युवा नौकरी के अभाव में जीवन के कष्टों को झेलते हैं।इस प्रकार लेखक मानवता के नाते निराश्रितों के प्रति समाज को अपने उत्तरदायित्व से अवगत कराने का यत्न करता है ।

आज़ादी के इतने वर्षों के बाद भी सरकार इनको विस्थापित एवं मानव अधिकार प्रदान करने में असफल रही है। शरणार्थियों की समस्या देश की उन्नति एवं एकता में बाधा उपस्थित कर रही है। भारत जैसे लोकतान्त्रिक राष्ट्र में यह समस्या राष्ट्र को कलंकित करती है ।

लेखक जगदीश चन्द्र जी का यह मानना है कि इस राष्ट्रीय समस्या का निराकरण केवल राजनीतिक स्तर पर ही पूर्णत:सम्भव नहीं है। सरकार की सहायता के बावजूद भी इन शरणार्थियों के जीवन को सहज और सरल रूप से सामाजिक जीवन के साथ जोड़ने में सरकार सफल नहीं कही जा सकती।लेखक का यह उद्देश्य है कि इन सभी विस्थापितों के साथ मानवतावादी दृष्टिकोण को रखते हुए स्थानीय समाज इन्हें उदारता से अपना ले,और जीवन के दैनिक व्यवहार में आपसी सहयोगसे काम ले,तो यह समस्या सहज ही दूर हो सकती है।इस प्रकार इस राष्ट्रीय समस्या को उदारता के साथ जनता द्वारा राष्ट्रीय फलक पर हल करने का लेखक ने संकेत किया है ।

(vi) हजार घोड़ों का सवार -'यादवेन्द्र शर्मा - चन्द्र '--

'यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' लिखित 'हजार घोड़ों का सवार' उपन्यास समाज में व्याप्त सामाजिक, धार्मिक,आर्थिक और राजनीतिक अत्याचारों से सम्बन्धित है। उपन्यास की कथावस्तु स्वतन्त्रता से पहले शुरू होती है और स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद इसका अन्त होता है ।

उपन्यास का नायक'गीधू' मेधू चमार का सबसे बड़ा लड़का है। चमार होने के बावजूद भी गीधू बिना डरे अपने क्रॉतिकारी विचारों को लोगों के सामने व्यक्त करता है।सामाजिक रूढियों, ऊँच-नीच, सामंती व्यवस्था और घर की दयनीय स्थिति को देखते हुए वह,बाल्यवस्था में ही 'कमठाणा ' नामक स्थान में मजदूरी करने चला जाता है। वहाँ मित्र जमनु की मृत्यु हो जाने पर,वह काम छोड़कर बीकानेर अपने गाँव वापिस आ जाता है।गाँव में सामाजिक असमानता,निम्न वर्ग पर अत्याचार,उच्चवर्ग द्वारा उनका शोषण और समाज के ठेकेदारों के कटुवचनों को सुनकर वह दु:खी रहता है। एक दिन अलगरजिया बाबा के सम्पर्क में आकर उन्हें अपना गुरू बनाता है। बाबा छुआछूत की सामाजिक-व्यवस्था को नहीं मानते थे।वे गाँव के हरिजनों को उच्चवर्ग के शोषण के खिलाफ लड़ने की प्रेरणा देते हैं। बाबा के बढ़ते हुए प्रभाव को देखकर गाँव के उच्चवर्गीय सामंती लोग बाबा की हत्या कर देते हैं ।

गीधू, बाबा के विचारों से प्रेरित होकर साधु बन जाता है। हरिद्वार में जब वह देखता है कि धर्म की आड़ में भोले-भाले लोगों पर अत्याचार किया जा रहा है, तो उसे जीवन से वितृष्णा और नफ़रत हो जाती है। वह बीकानेर वापिस आ जाता है। गाँव आकर वह सामंती शोषण और अत्याचारों के खिलाफ उच्चवर्ग से लड़ता है और समानता की माँग करता है।गाँव के ठाकुरों से झगड़ा कर 'भावलपुर' भाग जाता है। वहाँ जाकर देखता है कि हिन्दूओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाया जा रहा है। धर्म परिवर्तन की इस क्रूर प्रक्रिया को देखकर विरोध करने लगता है तो मुसलमान उसकी जान के दुश्मन बन जाते हैं । वह भयभीत होकर पुन: बीकानेर लौट आता है ।

अब गीधू अंग्रेजी फौज में भर्ती हो जाता है। राष्ट्रवादी विचारधारा के लक्ष्मीराज स्वामी,गीधू को फटकारते हुए कहते हैं "मुझे नहीं मालूम था कि तुम अपनी जान की बाजी साम्राज्यवादियों को बल देने के लिए लगा रहे हो? जिन अंग्रेजों को हम देश

के बाहर निकालने के लिए लड़ रहे हैं,तुम उनके साम्राज्य को सुरक्षित करने जा रहे हो।"[25]लक्ष्मीराज के विचारों को सुन गीधू को अपने से नफ़रत होने लगती है। अंग्रेजों द्वारा भारतीयों पर हो रहे अमानवीय अत्याचार उसे खलते हैं।उनके कारण लोगों को खाने के लिए दाना तक नसीब नहीं हो रहा था। स्थिति यहाँ तक पहुँच गई थी कि "मुट्ठी भर चावल के बदले वे कमीने दस-दस साल की लड़कियों के साथ बलात्कार कर लेते थे।एक-एक मछली के लिए एक-एक औरत उन्हें मिल जाती थी।"[26]अंग्रेजों के इस धृणित कार्य से गीधू को नफ़रत हो जाती है।वह अपने दोस्त बासू को कहता है "इन अंग्रेजों के लिए हम क्यों मरें ?"[27] गीधू अंग्रेजी सेना को छोड़ देता है। गीधू भारत को अंग्रेजों के चुंगल से स्वतंत्र करना चाहता है,वह भी हिंसा के द्वारा। अंग्रेजों की खुली लूट से गीधू का मन अत्याधिक व्यथित होता है वह कहता है "अहिंसा से अंग्रेज नहीं जायेंगे,यदि जायेंगे भी तो इस देश को लूट-खसोटकर,तबाह करके। जब में साधू था न,तब मुझे हरिद्वार में बताया गया था कि हर बड़ा अंग्रेज अफसर साल दो साल में लख़पति बन जाता है।देखना कभी न कभी ये लोग इस देश को नंगा कर देंगे।इस देश में जातियों व धर्मो को लड़ा देगें। ये बड़े कुटिल हैं ।"[28]

देश को आज़ादी,हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के विभाजन के साथ प्राप्त हुई। अंग्रेजी शासन से मुक्त इस देश में प्रजातन्त्र की स्थापना हुई।चुनाव के द्वारा लोगों के प्रतिनिधि शासन-व्यवस्था की बागड़ोर संभालेंगे, लेकिन चुनाव में विजय प्राप्त करने के लिए राजकीय पक्ष जातीवाद का सहारा लेने लगे। स्वतन्त्र भारत का समाज आज भी जातिवाद की जंजीरों से मुक्त नहीं हो पाया है, बल्कि राजकीय पक्षों ने अपनी सत्तालोलुपता से प्रेरित होकर इस सामाजिक दुषण को अधिक कारगत और प्रभावशाली बनाया है।गीधू नई विचारधारा रखते हुए जातीयता का विरोध करता है। उसका कहना है कि"एक दिन आप सब इस देश में एक-एक वर्ग को इतना बाँट देंगे, उसे इतना काट डालेंगे कि यहाँ केवल छोटी-छोटी जातियाँ ही रह जायेंगी।.... इस देश में न कभी कोई भारतीय रहेगा और न कोई आदमी।यहाँ रहेंगे धर्म, जातियाँ, सम्प्रदाय और एक का आदमी दूसरी जाति के आदमी से धृणा करेगा। सन् १९४७ का पाकिस्तान तो एक बना है। मुझे लग रहा है कि जिस तरह से यहाँ देश-सेवक और नेता पैदा हो रहे हैं,वे हजारों'जातिस्तान' प्रदान कर देगें।"[29] वह अपनी पहचान

'भारतीय' संज्ञा से करता है। निम्न जाति के अधिकारों के लिए संघर्ष करता हुआ संसद सदस्य बन जाता है।एक दिन इसी प्रकार न्याय की माँग करता हुआ शहीद हो जाता है ।

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र','हजार घोड़ों का सवार'एक व्यंग्यात्मक उपंयास है। शीर्षक से स्पष्ट है कि अनेक घोड़ों पर सवार व्यक्ति गति नहीं कर सकता। प्रत्येक घोड़े की दौड़ अलग-अलग दिशा में होने पर सवार बुरी तरह से गिरता ही है। इस प्रकार जातीयता, धर्म, भाषा आदि को प्रधानता देने वाले इस देश के लोगों ने देश की दशा अत्यन्त दयनीय बना दी है।आज की दिगभ्रमित युवा पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करता है गीधू। जाति, धर्म के नाम पर बँटे हुए समाज मे 'भारतीय' को ढूँढने का यहाँ यत्न है।

'हजार घोड़ों का सवार' उपन्यास में निरूपित चेतना --

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' का प्रस्तुत उपन्यास अंग्रेजो के शासनकालीन तथा ततपश्चात की निकटवर्ती स्वतन्त्र भारत की विभाजित राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक परिस्थितियों से यह सम्बन्धित है ।

लेखक ने उपन्यास के प्रधान चरित्र 'गीधू' द्वारा देश के गरीब, निर्धन और पिछड़े हुए वर्ग के लोगों की दयनीय दशा का चित्रण किया है। गीधू उस संघर्षशील पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करता है जो इस देश की प्राचीन रूढ़ियों की जंजीरों से मुक्त होने के लिए छटपटा रहा है। वह जीवनभर समाज और धर्म के ठेकेदारों से संघर्षरत रहता है और अंत में शहीद हो जाता है। गीधू चमार का लड़का है, अत: उसे ऊँच-नीच और छुआ-छूत की सामाजिक रूढ़ियों,सामन्ती व्यवस्था तथा धार्मिक ठेकेदारों के साथ निरन्तर संघर्ष करना पड़ता है। अपने क्राँतिकारी विचारो के परिणामस्वरूप उसके व्यक्तित्व में साहसिकता एवं निर्भीकता दिखाई देती है।कहीं-कहीं वह पलायनवादी भी बन जाता है लेकिन मुख्यत: वह समाज के पिछड़े वर्ग के संघर्षशील जीवन का प्रतिनिधित्व करते हुए अधिकार और न्याय के लिए लड़ता रहता हैं।"यह उपन्यास एक ऐसे संघर्षशील व्यक्ति की गाथा है जो वर्तमान समाज-व्यवस्था को मानवीय सम्वेदनाओं की मूल्यवत्ता के परिप्रेक्ष्य में वर्ग चेतना से मुक्ति के अहसास में विश्लेषित करता है।"[30] गीधू के क्राँतिकारी विचारों को मार्गदर्शन एवं शक्ति प्राप्त होती है, अलगरजिया बाबा के चरित्र से।बाबा के व्यक्तित्व और विचारों से प्रेरित होकर वह धार्मिक आश्रय प्राप्त करने का यत्न करते हुए हरि के द्वार जैसे पवित्र तीर्थस्थान पर पहुँचता है।देश की यह बदनसीबी

है कि समस्त विश्व को धर्म का प्रकाश देनेवाला हमारा सनातन धर्म,आज बाह्याडांबर, छलकपट और कर्मकाण्डों की मायाजाल में समाज के अशक्त और पिछड़े हुए लोगों का शोषण करता है। गीधू हिन्दू-मुस्लिमों के अत्याचारों से दु:खी होकर राजनीती के क्षेत्र में प्रवेश करता है। लक्ष्मीराजस्वामी के स्वदेशी विचारों से प्रेरित होकर अंग्रेजी हकूमत की सरकारी नौकरी से नाता तोड़ देता है। आज़ादी की प्राप्ति के पश्चात् लोकतत्रिक व्यवस्था की सुदृढ़ नींव डालने के उद्देश्य से देश में चुनाव घोषित होता है। लेकिन सामाजिक दूषण से अभी भी लोग मुक्त नहीं हो पाये थे।

जातीयता के नाम पर वोट बटोरने वाले राजकीय-पक्षो से भी गीधू की टक्कर होती है। वह विरोधात्मक स्वर में कहता है"एक दिन आप सब इस देश में एक-एक वर्ग को इतना बाँट देंगे,उसे इतना काट डालेंगे कियहाँ केवल छोटी-छोटी जातियाँ ही रह जायेंगी।.....इस देश मे न कभी कोई भारतीय रहेगा और न कोई आदमी। यहाँ रहेंगे धर्म,जातियाँ संप्रदाय और एक का आदमी दूसरी जाति के आदमी से धृणाकरेगा।"[31] अंत में देश के दीन-हीन समाज के पिछड़े हुए तथा धर्म की उदात्तता से वंचित लोगों का प्रतिनिधित्व करने वाला गीधू, इनके लिए अधिकार और न्याय की लड़ाई लड़ते-लड़ते शहीद हो जाता है।

इस प्रकार " यह उपन्यास इसी सदी के पूर्वार्द्ध की राजनीतिक,सामाजिक और आर्थिक विषमताओं और परिस्थितियों का सुन्दर दस्तावेज बन पड़ा है।"[32] लेखक ने उपन्यास के कथानक द्वारा पेशेगत बनी हुई शोषित जातियों के उत्पीड़न व शोषण की गाथा कही है।बीसवीं सदी के आरम्भ से लेकर १९५२के आम चुनाव तक की सामाजिक राजनीतिक, आर्थिक स्थितियों का बेवाक और यथार्थपूर्ण चित्र इस उपन्यास में प्रस्तुत हुआ है।"[33]

vii रागदरबारी - श्रीलाल शुक्ल

'रागदरबारी'उपन्यास श्रीलाल शुक्ल की कथाकृतियों में ही नहीं अपितु सम्पूर्ण हिन्दी कथा-साहित्य में विशिष्ट स्थान रखता है।रागदरबारी उपन्यास की कथावस्तु का मुख्य केन्द्र शिवपालगंज है जिसे गाँव या कस्बा भी कहा जा सकता है। देश की भ्रष्ट राजनीति और लोकतांत्रिक संस्थाओं की कार्यपद्धति ने इसे पृथ्वी पर नरक बना दिया है।

उपन्यास का महत्वपूर्ण एवं प्रमुख पात्र वैध जी हैं। उपन्यास की पूरी कथावस्तु इनके कन्धे पर टिकी हुई हैं।पहले यह वैधक का कार्य करते थे परन्तु देश के प्रति अपने उत्तरदायित्व को अधिक महत्त्व दे कर जनता की सेवा मे लग गये।सत्ता का नशा जैसे-जैसे बढ़ता गया उनकी कूटनीति और स्वार्थपाटुता भी बढ़ती चली गई और उन्होनें सत्ता के तीनो क्षेत्रों कॉलेज,कोऑपरेटिव युनियन तथा गाँव सभा पर अपना अधिकार जमा लिया।

वैध जी,की छत्रछाया में गाँव का कॉलेज,गुटबन्दी का अखाड़ा बना हुआ है। 'छंगामल ईण्टर कॉलेज'के प्रिंसिपल वैध जी के खास आदमी हैं।इसी कारण वह कॉलेज में अपनी मनमानी करते हैं। वह अपने गुट के प्राध्यापकों को कुछ नहीं कहते। अतः मोतीराम जैसे प्राध्यापक पढ़ाते समय अपनी आटे की चक्की भी चलाते हैं। विरोधी गुट के प्राध्यापक यदि ऐसा करते हैं तो उन्हें डाँटा जाता है और नौकरी से निकाल देने की धमकी दी जाती है।प्रिंसिपल अपने अन्य दो गुणों के कारण भी प्रख्यात हैं, पहला फर्जी हिसाब-किताब बनाकर कॉलेज के लिए अधिक से अधिक सरकारी ग्राण्ट वसूलना,दूसरा क्रोध की चरमावस्था में गालियाँ देना।

वैध जी, जिनका कोऑपरेटिव सोसायटी में भी प्रभुत्व है इसी कारण सोसायटी मे गबन होने पर बड़ी शान्त मुद्रा में कहते हैं "हमारी युनियन में गबन नहीं हुआ था,इसी कारण लोग हमें सन्देह की दृष्टि से देखते थे। अब तो हम कह सकते हैं कि हम सच्चे आदमी हैं।[34] वैध जी ने प्रधानमंत्री का भाषण अखबार में पढ़कर समझ लिया कि गॉव का उद्धार गाँव सभा द्वारा भी हो सकता है।अभी तक वे गॉव का उद्धार कोऑपरेटिव युनियन और कॉलेज के सहारे ही करते आ रहे थे।गाँव सभा हाथ में नहीं थी। सनीचरा जो अनपढ़ है उसे गाँव के प्रधान के लिए चुना जाता है। उसे तो कुछ करना नहीं था, करना तो वैध जी को ही था उनकी सहायता से बिना दुम का बन्दर तमंचे के बल पर शिवपालगंज गाँव सभा का प्रधान बन गया।

वैध जी के भतीजे रंगनाथ को पुरे शिवपालगंज से नफ़रत हो जाती है।वह मास्टर खन्ना और मालवीय को कॉलेज की गुटबन्दी और अराजकता के विषय में 'डिप्टी डाईरेक्टर ऑफ एज्युकेशन' से बात कहने की सलाह देता है। प्रत्युत्तर में मास्टर खन्ना ,रंगनाथ को बताता है कि एक बार उनके वह उनके समक्ष उपस्थित हुआ था, लकिन

उन लोगों ने भी झूठी प्रशंसा करते हुए कहा, कि " तुम्हारा कॉलेज तो बहुत अच्छा है जी !तुम कहते हो कि वहाँ पर सिर्फ गुटबन्दी है,लड़को की पढ़ाई ठीक से नहीं होती, हिसाब-किताब गड़बड़ है, इम्तिहान में नकल करायी जाती है, प्रिंसिपल तुम लोगों से दुर्व्यवहार करता है।यह सब तो सभी कालेजों में होता है।लड़को की पढ़ाई ठीक से नहीं होती तो कोई क्या करें ?लड़के खुद नहीं पढ़ना चाहते तो उन्हें कोई कैसे पढ़ाये? हमारे जमाने में अच्छे खानदान के लड़के पढ़ने आते थे,ध्यानपूर्वक पढ़ते थे,अब भंगी-चमारों के लड़के पढ़ने आते हैं,तो पढ़ाई कहाँ से होगी ?"[35]

वैध जी के पुत्र रूप्पन बाबू भी इनके साथ मिल जाते हैं।यह देख वैध जी कहते हैं "तू नेता बनता है?मेरा विरोध करके तू नेता बनना चाहता है?आशा की थी कि वृद्धावस्था शान्ति से बीतेगीं।गाँव सभा का झगड़ा समाप्त कर चुका हूँ। सोचा था, इस कॉलेज का भार तुझे देता जाऊगाँ। तू विश्वासघाती निकला ! जा, अब तुझे कुछ नहीं मिलेगा। [36]

वैध जी मास्टर खन्ना से इस्तीफ़ा ले लेते हैं।दूसरे दिन प्रिंसिपल रंगनाथ को लेक्चरर की अर्जी करने को कहते है परंतु रंगनाथ इन्कार कर देता है।इस पर प्रिंसिपल कहता है "इससे कहाँ तक बचोगे बाबू रंगनाथ?जहाँ जाओगे,तुम्हें किसी खन्ना की ही जगह मिलेगी। "[37]

लेखक ने परम्परागत ढंग से कथा प्रस्तुत नहीं की है क्योंकि उनका उद्देश्य कहानी सुनाना नहीं था।श्री लाल शुक्ल जी ने स्वातंत्र्योत्तर भारत के सामाजिक और राजनीतिक जीवन की विसगंतियों को दिखाकर देश को आने वाले खतरे से सावधान किया है। देश मे फैली भ्रष्ट राजनीति के व्यापक प्रभाव का छोटा सा प्रतीक है 'रागदरबारी'।

'रागदरबारी' उपन्यास में निरूपित चेतना --

हिन्दी के राजनीतिक उपन्यासों में श्री लाल शुक्ल कृत 'रागदरबारी' का महत्त्वपूर्ण स्थान है।लेखक ने इस उपन्यास में व्यंग्य शैली के माध्यम से राजनीति के धृणित पक्षों को बड़ी ईमानदारी से प्रस्तुत किया है।डॉ.चन्द्रकान्त बांदिवडेकर का कथन है कि"शिवपालगंज राजनीति के बलात्कार से कलंकित हुआ है और उसकी कलंक गाथा ही 'रागदरबारी'का कथ्य है।'[38]आज की भ्रष्ट राजनीति,शासन व्यवस्था,भ्रष्ट शिक्षा पद्धति तथा देश की आर्थिक पूँजीवादी व्यवस्था का चित्रण व्यंग्य के माध्यम से किया गया है।

'रागदरबारी'का प्रमुख एवं केन्द्रीय पात्र है 'वैध जी'। वैध जी के चरित्र

चित्रण में आज के भ्रष्ट राजनेता की छबि को उभारा गया है।

शिवपालगंज के लोगों की आर्थिक सहायता के लिए कोऑपरेटिव युनियन की रचना होती है। इसके द्वारा गाँव की गरीब एवं निर्धन जनता की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने का उद्देश्य निहीत है।लेकिन वैध जी युनियन के संचालक के साथ मिलकर गबन करके अपनी जेबें गर्म कर लेते हैं।

देश के जनतांत्रिक राजव्यवस्था को सफल बनाने के लिए सरकार ने प्रत्येक मनुष्य को अच्छे नागरिक बनाने की सुविधा उपलब्ध करवाते हुए छोटे-छोटे गाँवों में भी शिक्षा-केन्द्र खोले हैं। उपन्यास के शिवपालगंज में लोगों को सुशिक्षित बनाने के उद्देश्य से छंगामल इंटर कॉलेज की स्थापना होती है।लेकिन शिक्षा का यह पवित्र क्षेत्र भी वैध जी और उनकी भ्रष्ट नीतियों में संलग्न लोगों द्वारा गुटबन्दी का अखाड़ा बना हुआ है।यहाँ अध्ययन-अध्यापन का कार्य गौण है और आर्थिक लाभ के लिए अन्य कार्य मुख्य हो होते हैं। कॉलेज की व्यवस्था को सुचारू रूप से बनाये रखने के लिए जनतांत्रिक पद्धति को अपनाकर चेयरमैन के चुनाव करवाये जाते हैं। लेकिन देश के राजनीतिक चुनाव की तरह इसमें भी योग्यता के स्थान पर धन और बल का उपयोग करके चुनाव जीते जाते हैं।कुल मिलाकर कॉलेज जैसे शिक्षा के क्षेत्र भी वैधजी जैसे भ्रष्ट राजनेताओं के दुष्प्रभाव से अछूते नहीं रहे हैं। नैतिक-मूल्यों की तुलना में अर्थ के प्राधान्य ने देश के हर क्षेत्र को अनैतिक बनाकर पतन की ओर अग्रसर किया है।

गाँव के सर्वांगिक उद्धार और व्यवस्था के लिए सरकारी योजना के अनुसार गाँव-सभा के प्रधान का चुनाव आयोजित किया जाता है। यहाँ भी वैधजी अपना प्रभाव अप्रत्यक्ष रूप से बनाये रखने के लिए 'सनीचरा' नामक अयोग्य और बेकार युवक को चुनाव में विजयी बनवा देते हैं।इस प्रकार शिवपालगंज पर भ्रष्ट व्यक्तित्व के स्वामी श्री वैधजी का पूर्णतः वर्चस्व बना रहता है।

श्री लाल शुक्ल जी अपने उपन्यास 'रागदरबारी' में यह बताना चाहतें हैं कि"स्वातंत्र्योत्तर भारत के जनतांत्रिक व्यवस्था की विफलताओं ने हमारे जीवन-मूल्यों, आस्थाओं, आदर्शों, विश्वासों एवं सांस्कृतिक परम्पराओं की नींव हिलाकर रख दी है। नैतिक मूल्यों का हास हमारे जीवन की सबसे बड़ी विडम्बना है। जनतंत्र में चुनावों की महत्ता एवं पवित्रता मात्र एक छलावा,धोखा और मखौल बनकर रह गयी। नेता, समाज-सेवक और सरकारी नौकर, सेवा के नाम पर समाज को लूट रहे हैं।"[39] डॉ०लक्ष्मीनारायण

दुबे के मतानुसार"श्री लाल शुक्ल का उपन्यास 'रागदरबारी' की रचना हिन्दुस्तान के गाँवों की हालत,इस दुनिया की पुलिस,थानों,अफसरों,स्कूलों,विद्यालयों,प्राचार्यो,ग्राम के राजनीतिज्ञों और उनके चुंगल में पड़ी सहकारी संस्थाओं सबके धृणित कारनामों एवं पक्षों को बड़ी ईमानदारी से साथ उभारती है।"[40]

लेखक भ्रष्टाचार,अन्याय,बुराईयों,विसंगतियों की पर्त दर पर्त खोलकर पाठक का मोह भंग कर उसे यथार्थ की कटुता और विकृतियों से परिचित कराता है। स्वतंत्रता के पश्चात देश की जनतांत्रिक व्यवस्था की असफलताओं ने हमारे जीवन-मूल्यों आदर्शों, विश्वासों एवं आशाओं की नींव को डगमगा दिया है। गाँव प्रधान के चुनाव में सनीचरा की विजय लोकतांत्रिक मूल्यों एवं प्रणाली के खोखले हो जाने का सबूत है। लेखक ने यहाँ यह संकेत किया है कि"गाँव में राजनीति अपना स्थान बनाती जा रही है और समस्त मानवीय मूल्यों का हास होता जा रहा है। "[41]

लेखक श्री लाल शुक्ल जी ने जनता के समक्ष भ्रष्ट राजनेताओं के मुखौटो को खोलकर रख दिया है।देश की राष्ट्रय भावना को खोखला बनाने वाले वैध जी जैसे भ्रष्ट राजनेताओं की जनहित विरोधी प्रवृत्तियों से अवगत कराया है।

viii महाभोज - मन्नू भण्डारी

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् की राजव्यवस्था एक आदर्श जनतान्त्रिक राजनीति है। लेकिन आज चुनाव, वोट एवं भ्रष्ट राजनेताओं की टुच्ची राजनीति बनकर वह मूल्यहीन होकर रह गई है। मन्नू भण्डारी जी ने इस बदली हुई राजनीति के धृणित रूप को दिखाने का एक सफल प्रयत्न किया है।"महाभोज'आज की राजनीतिक जीवन में आयी तिकड़मबाजी,शैतानियत,मूल्यहीनता और संड़ाध का चित्रण करने वाला उपंयास है।आज की राजनीति को पूंजीवादी व्यवस्था ने किस प्रकार भ्रष्ट और निकम्मा बना दिया है उसका प्रत्यक्ष चित्रण इस उपन्यास में किया गया है।" [42]

'महाभोज'उपन्यास की कथावस्तु का आरम्भ गॉव सरोह की घटनाओं से होता है। कुछ दिन पहले हरिजनों की बस्ती में आग लगा दी गई थी, जिसमें अनेक लोगों की मृत्यु हुई और कई लोग बेधर हुए। लेखिका ने हरिजनों के माध्यम से देश के गरीब और निम्नवर्ग के लोगों पर आज भी हो रहे सामाजिक अत्याचारों को उद्‌घाटित किया है।कुछ दिनों के पश्चात् इस गाँव में बिसेसर नामक एक नवयुवक की लाश पायी

जाती है।इस युवक के पिता परेशन हैं लेकिन किसी को भी इसकी मौत से कोई सरोकार नहीं,यहाँ तक की पुलिस भी निष्क्रिय रहती है। लेकिन अचानक बिसेसर की मृत्यु और उसका गाँव सरोहा अनेक राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र बन जाता है। इसका मुख्य कारण था गाँव में विधानसभा की एक खाली सीट के लिए होनेवाला चुनाव।सत्ताधारी पक्ष के नेता तथा विरोधी पक्ष के नेता अपनी अपनी पार्टीयों की प्रसिद्धि के लिए इस अवसर को भुनाने में क्या-क्या प्रयत्न करते हैं,यही इस उपंयास की अनेक घटना प्रसंगों में गुम्फित कथावस्तु है।

भूतपूर्व मुख्यमंत्री सुकुल बाबू,बिसेसर की मौत के अवसर पर सरोहा गाँव जाकर लोगों को संबोधित करके बिसेसर और हरिजनों के प्रति अपनी झूठी हमदर्दी जताते हैं। स्वंय को गरीब-दुखियों का मसीहा बताने का यत्न करते हैं।गॉव की गरीब जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्व के निर्वाह का अभिनय करके लोगों की सहानुभूति और चुनाव के दौरान वोट प्राप्त करने के लिए पूर्व भूमिका तैयार करते हैं।

दूसरी ओर सत्ताधारी पक्ष के मुख्यमन्त्री'दा साहब'इसी बारदात का फायदा उठाने वाले विरोधी पक्ष के प्रयत्न को असफल बनाकर अपने पक्ष की लोकप्रियता प्राप्ति के यत्न में गाँव की जनता के समक्ष पुलिस को प्रामाणिक और न्यायी कारवाई का आदेश देते हैं।'मशाल' के तंत्री दत्ता साहब को जनता के प्रति,सामाचार-पत्र के उत्तरदायित्व के निर्वाह के उपदेश के बहाने कुशलता से समाचार-पत्र के पार्टी विरोधी स्वर को अपने अनुकूल परिवर्तित करते हैं।वे अपनी वाकचातुर्यता से दत्ता साहब को सुकुल बाबू के विरूद्ध लिखने के लिए मज़बूर करते हैं।'दा साहब'दूसरी चाल के रूप में सरोहा की गरीब जनता के लिए आर्थिक सहायता के रूप में 'घरेलू-उद्योग योजना' के नाम से एक सरकारी योजना की घोषणा करते हैं और ग्रामजनों के समक्ष इस योजना का उद्घाटन बिसेसर के पिता हीरा से करवाते हैं। इसके द्वारा वे प्रतिकूल स्थिति को अपने अनुकूल बना लेते हैं।यद्यपि बिन्दा जैसे नवयुवान के ह्रदय पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। बिन्दा भीड़ से निकल कर दा साहब के समक्ष आकर कहता है कि "बिन्दा डरेगा भी नहीं, चुप भी नहीं रहेगा और बिकेगा भी नहीं इन टुकड़ों से जो आप डालने आये हैं।"[43]

दा साहब अपने राजनैतिक प्रभाव को बनाये रखने के लिए शाम, दाम, दंड भेद की नीति भी बड़ी कुशलता से अपनाते हैं। पक्ष के असंतुष्ट लोगों को भय या लोभ से अपने साथ बनाये रखते हैं। एस.पी. सक्सेना बड़ी मेहनत से बिसेसर की हत्या करने वाले मुज़रिम को ढूँढकर रिपोर्ट तैयार करता है,लेकिन दा साहब इस

रिपोर्ट का उपयोग चुनावी लाभ उठाने के लिए करते हैं। डी.आई.जी. को आई.जी.के रूप में बढ़ौती देकर दोषी जोरावर सिंह के विरूद्ध तैयार की गई रिपोर्ट को निर्दोष बिंदा के विरूद्ध बदलवा देते हैं। दूसरी ओर हत्या की सज़ा का भय दिखाकर जोरावर को चुनावी लड़ाई से हटा देते हैं। इस प्रकार मुख्यमंत्री के पद पर बैठकर भी 'दा साहब' अपने और पार्टी के राजनैतिक लाभ के लिए कितने ही निर्दोष लोगों की जिंदगी को नरक की आग में झुलसने के लिए मजबूर करते हैं।'महाभोज'समकालीन राजनीतिक क्षेत्र की बुराइयों का कच्चा-चिट्ठा खोलने वाला एक महत्त्वपूर्ण उपन्यास कहा जा सकता है।

'महाभोज' उपन्यास में निरूपित चेतना --

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् की हमारी शासनव्यवस्था जाति,धर्म,अर्थ .के भेदभाव से अलिप्त रहकर जनता के सामाजिक,आर्थिक और राजनीतिक अधिकार को सुरक्षित रखने वाली,विश्वभर में श्रेष्ठतम राजव्यवस्था है।लेकिन"आज की राजनीति ने जीवन को अर्थहीन और विषाक्त बना दिया है।अर्थ की महत्ता ने राजनीति को पूर्णत: भ्रष्ट और दूषित बना दिया है "[44] मन्नू भण्डारी ने महाभोज में इसी राजनीति के भ्रष्ट स्वरूप और लोक जीवन पर उसके दुष्प्रभाव को वर्णित किया है।

आज के इस आधुनिक वातावरण मे लिखा गया'महाभोज'उपन्यास एक सफल राजनीतिक उपन्यास है। लेखिका मन्नू भण्डारी जी ने दा साहब के माध्यम से राजनेताओं के दोहरे व्यक्तित्व को और उनके द्वारा चलायी जा रही कुटिल राजनीति का पर्दाफाश किया है।मुख्यमंत्री दा साहब,भूतपूर्व मुख्यमंत्री सुकुल बाबू,लोचन,बापट,मेहता, राव और चौधरी के चरित्रों द्वारा लेखिका ने आज के भ्रष्ट एवं स्वार्थी राजनेताओं के मूल्यहिन चरित्रों को उभारा है।

मुख्यमंत्री दा साहब राजनेताओं के समक्ष अपने उज्जवल और कर्मयोगी व्यक्तितव की छबि को बनाये रखने के लिए सरकारी कार्यों में न्याय, प्रामाणिकता और जनता के लिए समर्पितता की भावना को उजागर करने का यत्न करते हैं।अत: वे जनता के सामने पुलिस अधिकारियों और अखबारवालों की आलोचना कर, उन्हें डाँटते हैं, परन्तु बाद में प्रलोभन देकर या दबाव के द्वारा अपना उल्लू सीधा करते हैं।लेखिका यहाँ यह बताना चाहती है कि जिस प्रकार हाथी के खाने और दिखाने के दांत अलग-अलग होते हैं।उसी प्रकार आज के राजनेताओं के बाहरी और भीतरी रूप और कार्य भी भिन्न-भिन्न होते हैं।

दा साहब का राजकीय पक्ष के असंतुष्ट लोग-त्रिलोचन,चौधरी आदि चुनाव के दरम्यान विरोधी पार्टी की तरफ अपना झुकाव रखते हैं।लेकिन चतुर और कूट राजनीति के माहिर दा साहब,पक्ष के लिए आवश्यक महत्ता के अनुसार,उन्हें प्रलोभन देकर अपनी ही पार्टी में बनाये रखते हैं। पार्टीयों के आपसी दावपेंच आज की प्रमुख राजनैतिक पक्षों के दल-बदल करने वाले राजनेताओं के स्वार्थी चरित्रों को प्रतिबिम्बित करती है।

देश की शासनव्यवस्था में सरकार और जनता के बीच सेतु रूप में दो महत्वपूर्ण संगठन हैं।एक पुलिस तंत्र और दूसरा समाचार पत्र।पुलिस तंत्र का गठन सरकार के द्वारा अवश्य होता है लेकिन उसका कार्यक्षेत्र महद रूप में जनता की जान-माल की सुरक्षा से सम्बन्धित है। समाचार संस्थाओं का गठन स्वतन्त्र रूप से है,लेकिन उनका उत्तरदायित्व भी मानव अधिकार की सुरक्षा हेतु है। प्रस्तुत उपन्यास में, दोनों संगठनों के भ्रष्ट रूप को उद्घाटित करते हुए यह स्पष्ट किया है कि ये दोनों तंत्र जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह न करके स्वार्थवश सरकार के आधीन बने रहते हैं।

उपन्यास में गरीब जनता का प्रतिनिधित्व करने वाले हीरा,बिन्दा,सक्सेना और रूक्मा आदि चरित्रों को देखा जा सकता है। हीरा जैसे पात्र के द्वारा जनता की निरीह दयनीय स्थिति का लेखिका ने चित्रण किया है।बिन्दा,सक्सेना और रूक्मा जेसे चरित्र जनता का प्रतिनिधित्व करते हुए अपने अधिकार की न्यायी मॉग के लिए सरकार से भीड़ते हैं,तो उनकी कैसी दुर्दशा होती है इसका सटिक चित्रण उपन्यास के अन्तिम घटना प्रसंगों में देखा जा सकता है। आज की भ्रष्ट राजनीति ने आम मनुष्य के जीवन को विषाक्त और संघर्षशील बना दिया है। "लेखिका ने वैयक्तिक पीड़ा के सीमित दायरे में से निकलकर समाज में मंडराते इस संकट की भयावह छाया को महसूसा है।उसकी अभिव्यक्ति में तराशी हुई बेबाकी भी है और कसमसाती हुई पीड़ा भी। उपन्यास का अंतिम दृश्य अधूरी-क्रान्ति को पूर्ण करने का आव्हान देता हुआ प्रतीत होता है। यही इस उपन्यास की सफलता है।"[45]

लेखिका ने राजनीति के घृणित पक्ष को उद्घाटित करके यह बताना चाहा है कि इन मूल्यहीन राजनेताओं और उनके द्वारा चलायी जा रही भ्रष्ट राजनीति के प्रभाव के कारण केवल राजतंत्र, ही नहीं लेकिन समाज का हर पक्ष भ्रष्ट प्रतीत होता है।जनता की रक्षा करने वाले पुलिस तंत्र और समाचारों पर अपना प्रभुत्व रख यह

राजनेता आपखुदशाही से शासन चलाकर जनता को गुमराह कर रहे हैं।यह राष्ट्र और जनता के हित में नहीं है। आज देश पतन की गर्त में गिरता जा रहा है, यह चिंता का विषय है।लेखिका ने इस उपन्यास के द्वारा समकालीन राजनीति के धृणित रूप को प्रतिबिम्बित करते हुए जन समाज को जागृत करना चाहा है।

ix 'महामहिम'-- प्रदीप पंत

साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में प्रदीप पंत जी का 'महामहिम' उपन्यास देश की समकालीन राजनीतिक परिस्थिति पर आधारित एक उद्देश्यमूलक उपन्यास है। उपंयास की कथावस्तु के द्वारा लेखक ने देश की बागडोर को थामने वाले राजनेताओं के मूल्यहीन चरित्रों और सिद्धान्त विहीन राजकीय क्रिया-कलापों का प्रभावशाली चित्रण किया है।

'महामहिम'उपन्यास का प्रमुख पात्र चन्द्रिका प्रतापसिंह है,जो राज्य के केन्द्रिय मंत्री हैं।केन्द्रिय मंत्री होते हुए भी राज्य-सरकार के वे प्रमुख सूत्रधार हैं।राज्य के मुख्यमंत्री पद के लिए उन्हें एक ऐसे व्यक्ति की तलाश है,जो उनके इशारों पर नाचता रहे।"[46]अत: पदविहीन व्यक्ति की खोज का कार्यभार अपने विश्वसनीय साथी लुभावनसिंह को सौंपते हैं।लुभावनसिंह को इसके बदले में सरकारी आवास की सुविधा प्राप्त होती है।राजशासन में महत्वपूर्ण पद के अधिकारी बनकर चन्द्रिका प्रताप सिंह गरीब लोगों की सहायता के स्थान पर अपने रिश्तेदारों के छोटे-मोटे काम सम्पन्न करते हैं।एक दिन लुभावन सिंह की भेंट तोताराम नामक एक व्यक्ति से होती है, जो उनके पास मेडिकल कॉलेज में अपने रिश्तेदार के लिए दाखिला लेने आया था। लुभावन सिंह को उसका व्यक्तित्व एक तोते जैसा प्रतीत होता है,जो सिखाई गयी बात ही बोलता हो।अत:वह चन्द्रिका प्रताप सिंह से तोताराम की मुलाकात करवाता है। परिणामस्वरूप चन्द्रिका प्रताप सिंह विधायकों के समक्ष तोताराम का नाम मुख्यमंत्री पद के लिए घोषित करते हैं।विरोधी विधायक दल के नेता जटाधर शुक्ल को एकाकी और प्रभावहीन बनाने के लिए उसके साथियों को मंत्रीपद प्रदान कर चन्द्रिका प्रताप सिंह उन्हें अपनी ओर खींच लेते हैं। तोताराम इतना अयोग्य है कि मुख्यमंत्री पद के शपथ-समारोह में वह राज्यपाल को उठकर सम्मान देना भी नहीं जानता है। लुभावन सिंह शपथ के पश्चात् तोताराम को उसकी गल्ती का एहसास करवाते हैं, तो प्रत्युत्तर में वह कहता है कि " तो फिर यह बात पहले क्यों नहीं बताई"[47]

जटाधर शुक्ल भी चरित्रहीन राजनेता हैं।वे अनेक स्त्रियों के साथ अवैध सम्बन्ध बनाये हुए हैं।आवास मंत्री जनार्दन सिंह जब उनसे सरकारी कोठी खाली करवाने की बात कहते हैं तो वे प्रत्युतर में आवास मंत्री द्वारा सूखा राहत कोष में किये गये भ्रष्टाचार के रहस्य खोलने की धमकी देते हैं।जनार्दन भयभीत होकर वह नीति अपनाता है कि तेरी भी चुप मेरी भी चुप।

कथावस्तु के मध्य में तोताराम जैसे निर्बल राजनेता द्वारा जनहित और सरकारी व्यवस्था के नाम पर किये गये कार्यों में निहीत निजी स्वार्थ लोलुपता को लेखक ने उजागर किया है। राज्य में जनहित के उद्देश्य से नशाबंदी लागू की जाती है, लेकिन उसका पालन मुख्यमंत्री तोताराम स्वयं नहीं करता है। बाढ़ के नाम पर बाढ़पीड़ित लोगों की सहायता हेतु जो धनराशि इकट्ठी की जाती है, उन रूपयों का गबन भी मुख्यमंत्री द्वारा होता है। राज्य के मंत्रीमंडल के विस्तार के दरम्यान दल बदलकर आने वाले प्यारेलाल और उसके साथियों को मंत्रीमंडल में वे शामिल नहीं करते।चन्द्रिका प्रतापसिंह मुख्यमंत्री तोताराम को कहते हैं "घबराओ मत वे लोग तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ पाएँगें। अभी-अभी दल-बदलकर आये हैं,अब फिर इतनी जल्दी दल परिवर्तन करने की हिमाकत नहीं करेंगे।"[48]कुशल राजनेता के रूप में मुख्यमंत्री दल बदलने वालों की मजबूरी को ध्यान में रखकर ही उन्हें पदविहीन रखते हैं।विधानसभा अधिवेशन के दरम्यान विरोधी दल का विरोध बढ़ जाने पर विधानसभा का सत्र समाप्त घोषित किया जाता है।

जटाधर शुक्ल अपनी राजनीतिक पराजय से दु:खी होकर,छात्रों द्वारा विद्यार्थी आन्दोलन आरम्भ करवाते हैं।लेकिन मुख्यमंत्री तोताराम आन्दोलन को असफल बनाने के लिए राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के प्रमुख नेता स्वामी-ब्रह्माचारी को मंत्री बनाकर आन्दोलन को असफल कर देते हैं।हिन्दू-मुस्लिम दंगो के भड़कने पर ब्रह्माचारी उन्हें भी शांत करवा देता है।तोताराम को मुख्यमंत्री बने हुए छ:महिने होने वाले थे।अत: राजनीति के अनुसार तोताराम को मुख्यमंत्री बने रहने के लिए अब विधायक बनना जरूरी है।तोताराम के नेतृत्व में सब विधायक प्रसन्न हैं। सभी अपना विश्वास उनके साथ व्यक्त करते हैं।यह सब देख तोताराम को विधायक बनाने की तैयारी जोर-शोर से शुरू हो जाती है।

इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने समकालीन राजनीतिक गतिविधियों का चित्रण करके राजनेताओं के मूल्यहीन चरित्र और उनके द्वारा चल रही राजनीतिक व्यवस्था की असंगतियों को प्रकाशित किया है।

'महामहीम' उपन्यास में निरूपित चेतना --

श्री प्रदीप पंत का प्रस्तुत उपन्यास समकालीन शासन व्यवस्था में सत्ताधीश महानुभावों के भ्रष्ट चरित्र और उनके काले कारनामों से संबंधित है।देश के करोड़ों लोगों के स्वास्थ्य, सुखाकारी और समृद्धि का भार जिन महामहिमों के कन्धों पर है, वे कितने निर्बल,अयोग्य,स्वार्थी,भ्रष्ट और चरित्रहीन हैं, उसका यथार्थ परिचय इस उपन्यास के अन्तर्गत मिलता है। इन महानुभावों के हीन चरित्र, उनके स्वार्थपरक क्रियाकलाप तथा सत्ता हथियाने के लिए खेले जाने वाले राजनीतिक दाव-पेचों का कच्चा-चिट्ठा उपन्यास की कथावस्तु में लेखक ने प्रस्तुत किया है।देश को उन्नति के शिखर पर पहुँचने के स्थान पर पतन की गर्त में धकेलनेवाले सत्ताधीशों के मूल्यविहीन चरित्र और सिद्धांत विहिन कार्यों की सशक्त अभिव्यक्ति इसमें पायी जाती है।

चन्द्रिका प्रसाद एक केन्दिय मंत्री हैं वे अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए राज्य के मुख्यमंत्री पद पर भी किसी अपने निर्बल व्यक्ति को बिठाने की योज़ना करते हैं।राजनीति से नितान्त अबुध तोताराम की पसन्दगी होती है क्योंकि वह केवल सिखायी बातों का ही पुन:उच्चारण करता है।इस प्रकार केन्द्रीय मंत्री अपनी गुटबन्दी द्वारा राज्य एवं केन्द्र पर अपना अधिकार बनाये रखते हैं।

चुनाव में मुख्यमंत्री के रूप में तोताराम का विरोध करनेवाले विरोधी विधायकों को मंत्रीपद देकर खरीद लिया जाता है। इससे स्पष्ट है कि चुनाव जैसी लोकतांत्रिक प्रक्रिया को स्वार्थ और लोभ के मायाजाल में असफल और अर्थहीन बनाने का एक व्यवस्थित षडयंत्र आज के राजकीय पक्षों द्वारा चलाया जा रहा है।

जटाधर शुक्ल राजनीतिक संघर्ष में जब पराजित होने लगता है तब छात्रों का आन्दोलन और हिन्दू-मुस्लिम दंगो को भड़काने जैसे जन-हित विरोधी कार्य करने पर उतारू हो जाता है। इन प्रसंगो से स्पष्ट है कि पद की लालसा में अन्धे राजनेता राष्ट्र और जनता के हित की होली जलाने से भी हिचकिचाते नहीं है। लेखक ने भ्रष्ट नेताओं पर करारा व्यंग्य कसते हुए यह बतलाना चाहा है कि सत्ताधारियों की राजनीति जनता के व्यापक हितों के लिए न होकर निजी स्वार्थ,जोड़-तोड़ तथा अपने पद और अधिकारों की रक्षा हेतु करते हैं। जनहित विरोधी सांप्रदायिकता का ज़हर फैलाने और सत्ता का दुरूपयोग करना बुरी बात है।"[49]

चन्द्रिका प्रताप का अपने रिश्तेदारों का कार्य-सम्पन्न करना,तोताराम का राज्य में नशाबन्दी लागू करके खुद नियमित शराब सेवन करना, बाढ़ के पश्चात् ठेकेदारों

को पुल के ठेके दिलवाकर उनमें कमीशन खाना,जटाधर शुक्ल का अनेक स्त्रियों के साथ अवैध संबंध रखना, अनधिकृत रूप से लुभावन सिंह का सरकारी आवास पर अधिकार बनाये रखना,आदि कथावस्तु के ऐसे घटना-प्रसंग हैं जो वर्तमान राजनीति की सिद्धांत-हीनता,अमानवीयता,भाई-भतीजावाद,भ्रष्टाचार,रिश्वतखोरी के दुषणों को उजागर करके वर्तमानकालीन राजनेताओं के बदइरादों पर करारा व्यंग्य किया है।[50]इस प्रकार प्रदीप पंत जी का यह उपन्यास" हमारे राजनीतिक जीवन और आस-पास के परिदृश्य की सशक्त अभिव्यक्ति होने के कारण एक जीवंत कथाकृति है। जिसमें सिद्धांतहीन और अमानवीय राजनीति की अन्तर्कथा बड़े बेबाक ढ़ंग से प्रस्तुत की गई है।"[51]

x काली आँधी -- कमलेश्वर

श्री कमलेश्वर जी का **'काली आँधी'** नारी प्रधान उपन्यास है। आधुनिक युग की नारी का कार्यक्षेत्र अब घर की चार-दिवारी तक सीमित नहीं रहा है।न ही वह अब अपनी नारी सहज सम्वेदनाओं के अनुरूप शिक्षा या सेवा के क्षेत्र तक सीमित रहकर समाजोपयोगी रहती है।प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने राजनीति जैसे पुरूष के एकाधिकार के क्षेत्र में नारी को प्रवेश देकर,उसके बौद्धिक एवं मानसिक सामर्थ्य का परिचय दिया है। 'काली आँधी'में राष्ट्र के निर्माण के लिए नारियों को आगे आने का आह्वान किया गया है। "[52]

प्रस्तुत उपन्यास की नायिका मालती का राजनीति में प्रवेश अपनी मर्जी या पसंदगी से नहीं होता है।उसका पति जग्गी बाबू का यह मानना है कि "देश के निर्माण में औरतों को भी आगे आना चाहिए। औरतें यानि हमारी आधी जनसंख्या जबतक इस तामीर में हाथ नहीं बटाँयेगी तब तक हर काम की स्पीड आधी रहेगी.. यह बेहद जरूरी है कि हमारे घरों की औरतें आगे आयें और हर काम में मर्दो का हाथ बटायें"[53]पति के ऐसे प्रोत्साहन से ही मालती का राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश होता है।जग्गी बाबू ही उसे भाषण लिखकर दिया करते थे। इसी कारण मालती जल्दी ही एक सफल राजनीतिज्ञ वक्ता बन जाती है। जिला परिषद् के चुनाव में मालती को अपनी प्रथम राजनीतिक विजय प्राप्त होती है। विजय के पश्चात सम्मान-समारोह में जग्गी बाबू की उपेक्षा होती है।यहीं पर पुरूष के अंहकार को पहली चोट लगती है। यह भावात्मक चोट धीरे-धीरे मतभेद, असंतोष, बेरूखी और दोषदर्शन के सोपानो को पार करती हुई छोटे-मोटे संघर्ष में परिणत होती है।

राजनीति में सक्रिय रूप से मालती के कार्यरत हो जाने से वह पारिवारिक जिम्मेदारियों के निर्वाह करने में असफल रहती है।पति और पुत्री की उपेक्षा होती है, जो जग्गी बाबू के दु:ख का एक प्रमुख कारण रहता है। उनको अब मालती का राजनीति में अत्यधिक व्यस्त रहना खलने लगता है।दूसरी ओर जग्गी बाबू के होटल को लेकर मालती को भी बदनामी का सामना करना पड़ता है।परिणामस्वरुप परिवार में परस्पर दोषारोपण और कलह का वातावरण निर्मित होता है।जग्गी बाबू,एक दिन अपनी पुत्री को साथ लिए घर और पत्नी को त्याग कर अन्यत्र चले जाते हैं।

दूसरी तरफ मालती राजनीति के रंग में पूर्णत:रंग जाती है। वह दिन-प्रतिदिन सफलता के सोपान पार करती हुई मंत्रीपद प्राप्त कर लेती है। संसदीय चुनाव में मालती को भोपाल का चुनाव क्षेत्र प्राप्त होता है। भोपाल में वह वरिष्ठ लोगों से घनिष्ठ संबंध स्थापित करके उन्हें अपनी पार्टी में शामिल कर लेती है। चुनाव जीतने के लिए वह सभी राजनीतिक दाव-पेचों को अपनाती है।

मालती को पराजित करने के लिए विरोधी पार्टी के लोग जातिवाद के नाम पर वोट प्राप्त कर साम्प्रदायिक दंगे भड़काते हैं। मालती और उसके कार्यकर्ताओं पर भी हमले होते हैं। परन्तु मालती झुकती नहीं है। वह मौके का फायदा उठाकर लोगों को संबोधित करते हुए कहती है कि "अगर हम हिन्दू और मुसलमान की तरह सोचते रहे तो यह मुल्क गारत हो जाएगा।"[54]जनता पर उसके भाषण का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।

चुनाव-प्रचार अभियान के दौरान मालती की मुलाकात पुन:जग्गी बाबू से होती है।जग्गी बाबू होटल में मालती की पसन्दगी का विशेष ध्यान रखते हुए उसे सभी सुविधाएँ उपलब्ध करवाते हैं।वे नास्ता-भोजन में उन्हीं चीजों को बनवाते हैं, जो मालती की रूचि के हैं।मालती के प्रति होटल के मैनेजर का ऐसा विशेष रूझान देखकर विरोधी पार्टी के लोग मालती की बदनामी का एक अवसर प्राप्त कर लेते हैं।चुनाव प्रचार में उसके व्यक्तित्व को चरित्रहीन बताने का यत्न किया जाता है। परिणामस्वरूप मालती का पति-प्रेम जागरूक हो उठता है वह भरी सभा में जग्गी बाबू को साथ ले जाकर सबके सामने अपनेसंबंधों का राज़ खोल देती है। वह कहती है कि"यही हैं मेरे पति, पति परमेश्वर, मेरे दोस्त, मेरे प्रेमी और मेरे यार। जो कुछ भी हैं ; यही हैं और ये मेरे साथ आपकी अदालत में मौजूद है।"[55] जनता के समक्ष इन शब्दों को बोलकर मालती अपनी जीत को मजबूत कर लेती है।

चुनाव हो जाते हैं।मत गिनती होने पर पहले विरोधी पार्टी के लोग आगे थे, परन्तु कुछ समय के पश्चात् ही मालती की पार्टी विरोधी पक्ष से आगे निकल कर उन्हें सात हज़ार वोटों से हरा देती है।मालती की पार्टी की जीत की खुशी में स्वागत समारोह आयोजितकिया जाता है। लिली भी मालती का ऑटोग्राफ लेने आती है,लेकिन मालती अपनी पुत्री को पहचान नहीं पाती।जब उसे पता चलता है तो उसका मातृ हृदय पिघल जाता है। वह लिली से मिलने के लिए छटपटाने लगती है।लिली के मिलते ही उसकी आँखों में पानी भर आता है। वह उसे एक साथ कई चुम्बन दे देती है। वह लिली और जग्गी बाबू को अपने साथ दिल्ली ले जाना चाहती है लेकिन परिस्थितियाँ ऐसी नहीं है। लिली आगे पढ़ने के लिए फिर से पंचमठी चली जाती है।

इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने एक मध्यमवर्गीय परिवार की नारी की क्रमश: राजनीतिक सफलता के चित्र अंकित किये हैं। लेखक ने आधुनिक युग में नारी के सक्रिय योगदान के महत्त्व को निरूपित करने का यत्न किया है।

'काली आँधी' उपन्यास में निरूपित चेतना --

कमलेश्वर कृत 'काली आँधी' समकालीन राजनीतिक परिस्थिति का परिचायक उपन्यास है। इसका कथानक देश की ऐसी समसामायिक राजनीति से प्रभावित है, जिनमें नैतिक मूल्यों का ह्रास हुआ है और भ्रष्टाचार पनपा-बढ़ा है।'[56] लेखक ने आधुनिक नारी के सामर्थ्य को उजागर करते हुए उसकी राजनीतिक सफलता के चित्र अंकित किये हैं।आज की शिक्षित नारी,पुरूष के समान, राजनीतिक कूट-नीतियों को अपनाते हुए दिन-प्रतिदिन सफलता के साथ मंत्री पद पर आसिन होती है। चुनाव अभियान में विजयी होने के लिए राजनीति के तमाम हथकण्डों को नारी द्वारा अपनाकर,उसके बौद्धिक एवं मानसिक सामर्थ्य को लेखक ने उजागर किया है।

'काली आँधी' के कथानक से यह स्पष्ट है कि राजनीति का क्षेत्र एक ऐसा दुषित और भ्रष्ट क्षेत्र है, जहाँ नारी का सहज, भावात्मक और उदात्तवादी व्यक्तित्व भी निर्मम एवं चातुर्यपूर्ण बन जाता है।इससे स्पष्ट है कि इस क्षेत्र में विजयी होने वाला व्यक्ति राजनीतिक कूटनीतियों से बच नहीं सकता।

उपन्यास की नायिका मालती को राजनीतिक सफलता प्राप्त करने के लिए उन मूल्यों का भी बलिदान देना पड़ता है जो नारी के व्यक्तित्व को सांस्कृतिक गौरव

प्रदान करता है।आज की राजनीति में आधुनिक नारी अपने पारिवारिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्वों को भुला कर एक प्रमुख स्थान बना पाती है। "[57]

चुनाव जितने के लिए मालती अपनी चुनावी अभियान में गरीबी दूर करने, बेरोजगारी दूर करने,जनता की भलाई के लिए अनेक भावी योजनाओं की घोषणा करके जनता को झूठे आश्वासनों से गुमराह करती है।लेखक ने मालती के वक्तव्य द्वारा आज के राजनेताओं के जनता के साथ किए गये झूठे वादो पर व्यंग्य किया है। अत: अन्त में यह कहा जा सकता है कि " काली ऑधी एक ओर असफल दाम्पत्य की करूण कहानी लगती है। तो दूसरी ओर सम्पूर्ण देश में व्याप्त राजनीतिक छल, कपट और षडयंत्र की करूण कहानी है।"[58]

हमारी राष्ट्रीय सांस्कृतिक धरोहर को वहन करने वाली नारी ही यदि अपने स्वार्थ और कीर्ति के लिए उन बहुमूल्य संस्कारों का बलिदान देती है,तो राष्ट्र के भविष्य के सामने एक बहुत बड़ा खतरा प्रतीत होता है।

xi जंगलतंत्रम् - श्रवणकुमार गोस्वामी --

श्रवणकुमार गोस्वामी जी का 'जंगलतंत्रम्' उपन्यास नवीनतम शिल्प का एक प्रयोगात्मक उपन्यास भी कहा जा सकता है। इसे समकालीन परिस्थितियों का प्रतीकात्मक उपन्यास भी कहा जा सकता है। लेखक ने देश की शासन व्यवस्था, शासन व्यवस्था के प्रेरक तत्त्व,उनकी साँठ-गॉठ,स्वार्थ सिद्धि के लिए खेले गये दावपेंच तथा चरित्रों के मूल्यों की गिरावट का यथार्थ चित्रण इस उपन्यास में पाया जाता है।

गोस्वामी जी ने प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु को बच्चों की कहानी का रूप प्रदान करके उसे लोकरंजक रूप में प्रस्तुत किया है। उपन्यास के आरम्भ में नानी बच्चों के मनोरंजन के लिए पशुओं की एक कहानी सुनाती है।इस कहानी में सिंह,मोर, नाग और चूहा आदि पात्र पशु सृष्टि से लिए गये हैं। एक बार इन पशुओं का आपस में झगड़ा हो जाता है। अत: भगवान् शिवजी नाराज़ होकर उन्हें मृत्युलोक में भेज देते हैं । मृत्युलोक के जंगल में सिंह राजा बन जाता है । मोर उसका प्रशासक (सलाहकार) साथी बनता है। नाग पूंजीपत्तियों के प्रतीक रूप में चित्रित है और चूहा आम जनता का प्रतिनिधित्व करता है।गिरगिट बुद्धिवादी के प्रतीक और सियार-भेड़िया

आयाराम-गयाराम के प्रतीक रूप में हैं। मृत्युलोक के जगंल में सिंह प्रजातन्त्र की स्थापना करके नाग को वाणिज्य विभाग देता है। सिंह नाग से कहता है कि "यहाँ वाणिज्य में वही सफल होता है जो ज़हर उगलने की खूबी रखता है और हमेशा दो जुबानों का प्रयोग करता है।"[59] नाग को यह भी सलाह दी जाती है कि धन के बल पर गद्दी भी प्राप्त की जा सकती है। नाग को उक्त सलाह देकर सिंह के मन मे पश्चाताप होने लगता है।वह सलाहकार मोर से सलाह-मशवरा करके नाग की आय पर अंकुश रखने के लिए टैक्स लगा देता है।

नाग,मोर के साथ गठबंधन करके आम चीजों के दाम बढ़ा देता है। इस प्रकार वह अपनी धन सम्पत्ति में वृद्धि करने का यत्न करता है। आम आदमी का प्रतिनिधित्व करने वाला चूहा बढ़ती हुई महँगाई से परेशान होकर सिंह से शिकायत करता है, और अपने विरोध को जताने के लिए प्रदर्शन करता है। सिंह, चूहे के गुस्से को शान्त करने का यत्न करते हुए मोर और नाग के खिलाफ यथायोग्य कार्यवाही करने का आश्वासन देता है। दूसरी ओर नाग और मोर संगठित प्रयास के रूप में चूहे को मनाने के उद्देश्य से उसे एक अखबार का मालिक बना देते हैं। चूहा समकालीन घटनाओं को समाचार दैनिक पत्र में प्रकाशित करके लोगों तक पहुँचाने का यत्न करता है।प्रैस के द्वारा होती हुई अपनी बदनामी से नाग नाराज़ हो जाता है,और प्रैस को बन्द करवाने की धमकी देता है। सिंह, चूहे की सुरक्षा के रूप में प्रैस के राष्ट्रीयकरण की योजना को प्रस्तुत करता है, और बैकों का जंगलीकरण करके नाग को हो रहे आर्थिक लाभ से वंचित रखने का यत्न करता है।

जंगल मे सिंह के द्वारा चुनाव की घोषणा की जाती है चुनाव जीतने के लिए उसे पूंजीपत्ति नाग की सहायता की आवश्यकता पड़ती है।अत:वह नाग को प्रसन्न करने के लिए कहता है कि "नाग आज से तुम जिस-जिस किसी को भी, जहाँ भी चाहो,जैसे भी चाहो, जब भी चाहो, अपनी इच्छानुसार डस सकते हो।"[60] नाग और सिंह के गठबन्धन से सिंह चुनाव में विजयी होता है।सिंह और नाग द्वारा बाढ़ और तूफान की आपद स्थिति में हुए भ्रष्टाचार की खबर चूहे के अखबार में प्रकाशित होती है। अत: सिंह नाराज होकर अखबार के प्रकाशन पर प्रतिबंध लगा देता है।इसी दौरान जंगलीस्थान का आक्रमण होता है। जिसमें सेना दुश्मनों को पराजित करके उनकी काफी ज़मीन पर अधिकार कर लेती है। लेकिन सरकारी समझौते के अनुसार पराजित दुश्मन को पुन:

ज़मीन लौटा देती है।सिंह, नाग से सलाह-मशवरा करके चूहे को कैदी बना लेता है। उनके द्वारा यह खबर फैला दी जाती हैं कि प्लेग के कारण जेल में अनेक कैदियों की मृत्यु हुई जिनमें चूहा भी था।

इस प्रकार लोकतन्त्र में भी सिंह जैसे सशक्त और आततायी नेताओं द्वारा निरीह जनता को प्रताड़ित करके उन पर अत्याचार गुजारे जाते हैं। ऐसे आततायी राजनेता के अत्याचारों की चरमसीमा तब दिखाई देती है जब निर्दोष लोगों की हत्या को आकस्मिक मृत्यु रूप में घोषित किया जाता है। आज के वैज्ञानिक युग के सभ्य कहे जानेवाले सरकारी नेताओं की आपखुदशाही, उनकी अर्थ लोलुपता एवं अराजक शासन व्यवस्था का प्रभावशाली चित्रण लेखक ने प्रस्तुत किया है।लेखक ने प्रतीकात्मक शैली द्वारा पूंजीपतियों के साथ राजकीय पक्षों की साठगाँठ और जनहित विरोधी उनके क्रियाकलापों का व्यंग्यात्मक चित्रण किया है। उपन्यासकार स्थानों और पात्रों के नाम बदलकर अखबारी घटनाओं का सिलसिलेवार वर्णन समसामयिक राजनीति के रूप में, भाषा समस्या,बैंक राष्ट्रीयकरण,जीप-घोटाला काण्ड़,पब्लिक स्कूल रिलीफ के कार्यों में घपला, न्यायपालिकाओं में हस्तक्षेप जूनियर की मुख्य न्यायधीश पद पर नियुक्ति, व्यापार का राष्ट्रीयकरण, मंगलवाद की घोषणा, पड़ौसी से युद्ध, जीत, समझौता आदि को प्रस्तुत कर दिया है।'[61]

'जंगलतंत्रम्' उपन्यास में निरूपित चेतना --

'जंगलतंत्रम्' में जानवरों को प्रतीकों के माध्यम से चित्रित कर आज की राजनीति और समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, चोर-बाजारी, मूल्यवृद्धि आदि को चित्रित किया है। आज राजनीतिज्ञों की भ्रष्ट शासन प्रणाली, जोड़-तोड़ की राजनीति और स्वार्थ भावना के कारण देश अन्धकार की गरत में गिरता चला जा रहा है।"आज की राजनीति के तहत चलने वाली तथाकथित लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में यथार्थ चित्रांकन में भारतीय राजनीति के परखचे उड़ाए हैं । नाग पूंजीपति का

प्रतीक है जिसके जाल में छटपटाते हुए आम आदमी का चित्रण किया है"[62] उपन्यास में सिहं (राजनेता), मोर (प्रशासक), नाग (पूंजीपति) और चूहा (आम आदमी) का प्रतीक है । लेखक ने सिंह को प्रतीक रूप में चित्रित कर आज के राजनेताओं के कार्यों को चित्रित किया है जो जनमानस को नज़र अंदाज कर अपना उल्लू सीधा करने में लगे हुए हैं। पूंजीपतियों का सही चित्र नाग के माध्यम से चित्रित किया गया है जो देश और जनता की चिंता न कर चोर बाजारी, मूल्य वृद्धि कर अपनी तिजोरी भरने में लगे हुए हैं। मोर को प्रशासक के रूप में दर्शाया है जो अपने स्वार्थ को देख कभी नाग तो कभी सिंह से मित्रता करता है। चुहा आम आदमी का प्रतिनिधित्व करता है।बढ़ते हुए भ्रष्टाचार, चोर बाजारी और मूल्यवृद्धि आदि को देख सिंह के समक्ष प्रदर्शन करता है।आज के नेताओं की तरह ही सिंह भी कार्यवाही करने का आश्वासन देता है परन्तु करता कुछ नहीं है।

नाग को जब पता चलता है कि चूहे ने उसके खिलाफ शिकायत दर्ज की है तो वह चूहे को अखबार का कारखाना खोल शान्त करना चाहता है। चूहा अखबार के चालू हो जाने पर इन सभी के काले कारनामों को जनता के समक्ष प्रस्तुत कर उनमें जागृति लाने का प्रयत्न करता है।देश में बाढ़ और तूफान की राहत धन राशि के घोटाले की खबर जब चूहा अखबार में छापता है तो सिंह क्रोधित हो उसे जेल में बन्द करवा नाग को कहता है कि यह खबर फैला दो की जेल में प्लेग फैल जाने से चूहे की मृत्यु हो गयी है। " जंगलतंत्रम् में जंगल और जानवरों की कथा बच्चों की सी लगती है। प्रतीकों पर ध्यान जाते ही आज के राजनीतिज्ञों की परत दर परत कलाई खोलकर रख देती है। देश के अंतिम पच्चीस वर्षों की परिस्थितियों के यथार्थ की ऐसी स्वाभाविक, सहज, सरल भाषा-शैली में सार्थक निरूपण है।इनमें प्रतीकात्मकता का आद्योपान्त निर्वाह करते हुए समकलीन स्थितियों को ऐसे व्यक्त किया है कि देश का पूरा नक्शा सजीव हो उठा है।[63]

xii 'दारूल शफा'- राजकृष्ण मिश्र --

इस सदी के आठवें दशक में लिखा गया'दारूल शफा' समकालीन पतनशील राजनीति का यथार्थपरक उपन्यास है।"[64] आज की राजनीतिक पार्टियॉ मूल्यविहीन एवं दिशाभ्रमित हैं। फिर भी केन्द्रीय-सत्ता एवं राज्य-सत्ता पर अपने अधिकार को बनाये रखना चाहती हैं। इसके लिए वे अधिकांशत: दाम और दंड की नीतियॉ अपनाती है। जरूरत पड़ने पर शेष दो नीतियाँ साम-भेद का भी प्रयोग कर लेती हैं।लेखक श्री राजकृष्ण मिश्र जी ने इसमें देश की पतनशील राजनीतिक परिस्थिति के यथार्थ को उद्घाटित करने का यत्न किया है।

उपन्यास की कथावस्तु एक राजनीतिक पार्टी के सदस्यों की गतिविधियों से सम्बन्धित है। राज्य में मुख्यमंत्री पद के लिए उम्मीदवार के चुनाव की तैयारियाँ हो रही हैं। एक ही राजनीतिक पार्टी के दो गुट, एक दूसरे के विरोधी बनकर पार्टी में अपनी राजनीतिक महत्ता को बनाये रखने में प्रयत्नशील हैं।एक गुट,उत्सुकदास और कृष्णवल्लभ का है और दूसरा रंगीनराय का है। इन दोनों गुटों के विधायक, पद और सत्ता की लोलुपत्ता से कितने हीन और कमीने कार्य करते हैं, इसका यथार्थ चित्रण उपन्यास के कथा-प्रसंगों से प्राप्त है। लोबीराम जैसे लोभी विधायक इन सत्तालोलुपों की महत्वाकांक्षा को पूर्ण करने में सहायक बन के आर्थिक लाभ उठा लेते हैं।

लोबीराम, हरिजनों के अधिकार की हिमाकत करते हुए अपना उल्लू सीधा करने का यत्न करता है। वह रंगीनराय से कहता है कि "हम हरिजनों का शताब्दियों से शोषण होता चला आया है। ....देखो अब भारत के हृदय के समान सबसे विशाल प्रदेश में आज बीस वर्षों में भी किसी हरिजन को मुख्यमंत्री नहीं बनाया गया।"[65] लोबीराम,एक ओर रंगीनराय से हाथ मिलाकर, उनको मुख्यमंत्री के चुनाव में विजयी बनाने में सहायक होने का यत्न करता है। दूसरी ओर रंगीनराय को पराजित करने के लिए वह उत्सुकदास से पैसे ऐंठ कर उसके गुट को अधिक सशक्त बनाने के लिए तैयार होता है।

उपन्यास में केवल लोबीराम ही चरित्रहीन नहीं है। उत्सुकदास भी केन्द्र के गृहमंत्री गुरूपदस्वामी का परमशिष्य बनकर उनकी छत्रछाया में अनेक गैरकानूनी कार्य करके अर्थलाभ प्राप्त करता है। उन्हीं के गुट के साथी कृष्णवल्लभ के बन्धु, यशोदावल्लभ अफ़ीम की पेटियों के साथ तांबे के तारों की तरस्करी विदेशों में करवाते हैं। उनका यह कौभांड जब पकड़ा जाता है और आम-जनता के सामने इनके काले-कारनामे खुलने लगते हैं, तब केन्द्रिय गृहमंत्री गुरूपदस्वामी, अपनी आबरू बचाने के लिए, अपने साथियों से सम्बन्ध तोड़ लेते हैं। इससे मुख्यमंत्री पद के दावेदार उत्सुकदास की छवि पर भी कीचड़ उछलता है।ताबाँ घोटाला काण्ड की जॉच-पड़ताल एक प्रामाणिक पुलिस ऑफिसर

फूलदास को सौंपी जाती है। वह जाँच - पड़ताल के दरम्यान यशोदावल्लभ के दो ट्रक पकड़कर प्रमाण जुटा लेता है। यशोदावल्लभ अपनी बेइमानी को छुपाये रखने के लिए एक डकैत मित्र दुर्लभ कांछी द्वारा पुलिस आफिसर की हत्या करवा देता है। रंगीनराय, इस कौभांड का सम्बन्ध उत्सुकदास के साथ जोड़कर,उसे मुख्यमंत्री पद के लिए अयोग्य सिद्ध करने का यत्न करता है। इस प्रकार वह चुनावी परिणाम में स्वंय को विजयी बनाने की सम्भावना बढ़ा लेता है।

उत्सुकदास, रंगीनराय को पराजित करने के लिए दूसरी चाल चलता है। वह रंगीनराय के समर्थक बन रहे लोबीराम को विमला के सौंदर्य के मोहजाल में फँसा देते हैं। जब इससे भी काम नहीं बनता है, तब मुँह माँगी रकम देकर लोबीराम के गुट को खरीदने का यत्न करता है। इस प्रकार उत्सुकदास मुख्यमंत्री पद के चुनाव को अपने पक्ष में विजयी बनाने के लिए दंड और दाम दोनों की नीतियों को अपनाते हैं। अन्तिम परिणाम के रूप में रंगीनराय को पार्टी की अध्यक्षता से और कृष्णवल्लभ को पार्टी की प्राथमिक सदस्यता से हटाया जाता है।

इस प्रकार उपन्यास की कथावस्तु आज की राजनीतिक पार्टीयों के अनाचार,सत्ता हथियाने की दौड़ में एक दूसरे को पराजित करने के लिए प्रयुक्त दावपेंच, पार्टी के सदस्यों के मोल-तोल, अर्थलाभ के लिए की जानेवाली चोरियॉ, हत्याएँ आदि का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करती हैं।

'दारूल शफा' उपन्यास में निरूपित चेतना --

राजकृष्ण मिश्र का प्रस्तुत उपन्यास आज के राजनीतिक विधायकों और मंत्री पद के लोलुप लोगों की कारगुजारियों को बड़े ही सजीव और रोचक ढंग से वर्णित करता है।"[66]लेखक ने 'दारूल शफा' के रूप में एक ऐसे स्थान का वर्णन किया है जहाँ राजसत्ता या मंत्रीपद की प्राप्ति के लिए विधायकों द्वारा हो रहे समस्त कुकर्मों का पर्दाफाश होता है। श्री लालशुक्ल जी के मतानुसार -- 'दारूल शफा' एक बस्ती भी हो सकती है और संस्था भी ; काल्पनिक होते हुए भी वह जगह है, जहाँ आपा-धापी,हिंसा,भ्रष्टाचार, स्वार्थपरता और चापलूसी का हमारा जाना पहचाना यथार्थ, ... आज की जिन्दगी का असली दस्तावेज है।"[67]

'दारूल शफा' उपन्यास के प्रमुख पात्र उत्सुकदास,गुरूपदस्वामी,लोबीराम रंगीनराय जैसे चरित्रों के द्वारा आज के राजनीतिक विधायकों के असली चहेरों की

पहचान मिलती है। ऐसा लगता है कि श्री मिश्र जी ने वर्षो तक असली दारूल शफा के फेरे लगाकर इन राजनीतिक शतरंज के मोहरों की उठा-पटक को बहुत बारीकी से देखा होगा।"[68] यह उपन्यास कथ्य और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से रोचक है। लेखक ने दोहरे व्यक्तित्व वाले आज के भ्रष्ट राजनीतिक विधायकों की सत्तालोलुपता उनकी ऐय्याशी तथा रिश्वतखोरी, हिंसा, चोरी, हत्या, भ्रष्टाचार,गुंडागर्दी आदि किये गये अपकृत्यों का कच्चा चिट्ठा हमारे सामने खोलकर रख दिया है। प्रस्तुत उपन्यास समकालीन राजनेताओं के चारित्रिक-पतन का दस्तावेज़ी लेखा-जोखा हैं। ऐसे स्वार्थी, लोभी, मूल्यहीन, भ्रष्ट नेताओं के कुकर्मों के परिणामस्वरूप हमारी लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था आज अपना गौरव और विश्वसनीयता खो चुकी है। राष्ट्रीय सम्मान के लिए यह एक दुर्भाग्यपूर्ण राजनीतिक परिस्थिति कही जा सकती है।

आज की राजनीति में उखाड़-पछाड़ की घटनाओं के साथ-साथ राजनीतिक जीवन में व्याप्त अनुचित सैक्स सम्बंधों और चारित्रिक नैतिक विकृतियों को भी उपन्यासकार ने उजागर किया है। जिसमें गुरूपदस्वामी और बाईजी का सम्बंध, शान्ति प्रणाली और फूलदास, लोबीराम और लक्षमनिया का सम्बंध, उत्सुकदास का विमला देवी और प्रतिमा के साथ सम्बंध, जिसमें आज की राजनीतिक जीवन का विकृत व धृणित चेहरा देखा जा सकता है। 'दारूल शफा' आज की हमारी राजनीतिक जिन्दगी का अस्ली दस्तावेज है।

xiii एक और मुख्यमंत्री - यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' --

'एक और मुख्यमंत्री' श्री यादवेन्द्र शर्मा जी ' द्वारा चरित्र समकालीन राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन से सम्बंधित उपन्यास है। लेखक ने देश के राजनीति के विघटनशील परिवेश और पतनशील नेतृत्व का यथार्थ चित्र अंकित किया है।

इस उपन्यास का केन्द्रीय पात्र अरविंद है। वह एक मध्यमवर्गीय परिवार का महत्त्वाकांक्षी और सुशिक्षित नवयुवक है। बेरोजगार होने के कारण आये दिन उसे परिवार के सदस्यों के ताने सुनने पड़ते हैं। अत:एक दिन दु:खी होकर अपने घर और परिवार को त्याग कर अन्जान मंजिल की ओर चल पड़ता है। अपनी महत्त्वाकांक्षाओ को पुरा करने के लिए वह हिन्दू महासभा का नेता बन जाता हैं। रात-दिन कठिन परिश्रम करते हुए हिन्दू महासभा के जन - नेताओं में अपना विशिष्ट स्थान बना लेता है। देश-प्रेम से परिपूर्ण ओज प्रधान उसका वक्तव्य सबको प्रिय लगता है।अरविंद के राजनीतिक जीवन की पहली विजय ठाकुर नरेन्द्र सिंह को हत्या के आरोप से मुक्त करवाकर मिलती है।

अरविंद, पूर्णतःअवसरवादी व्यक्ति है। शरणार्थियों के वोट प्राप्त करने के लिए वह गुलाब नाम की अपहृता शरणार्थी युवती से विवाह करते हुए उसके पिता संतराम से कहता है कि"मैं जानता हूँ आपकी लड़की दागों से भर गयी है, आज के सामाजिक परिवेश में वह कलंकिनी कहलाएगी।उसका कहीं भी आदर सम्मान नहीं है।कहीं भी ठहराव-टिकाव नहीं है, किन्तु मेरे लिए वह उतनी ही पवित्र है, जितनी पहले थी।"[69]गुलाब से शादी कर वह शरणार्थियों का प्रिय नेता बन जाता हैं और गुलाब के पिता की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी भी बन जाता है।इस प्रकार शादी भी उसके लिए एक राजनीति का खेल होती है। अपनी वाक्-पटुता, दूरदर्शिता, कर्मठता और प्रतिभा के बल पर चुनाव लड़ने के लिए वह हिन्दू महासभा से त्यागपत्र देकर काँग्रेस की सदस्यता प्राप्त करता है। काँग्रेस में आते ही वह जनता के समक्ष कहता है कि " मैं आपके दु:ख दर्द को दूर करने में तन और मन लगा दूँगा। आपका मत कभी भी रंग ला सकता है। आप उस दल को ही मत दें, जिस दल का देश में बहुमत और जिनके पीछे जनमत हो । आज जनमत काँग्रेस के पीछे बना है। इसलिए आप काँग्रेस को वोट देकर सफल बनायें।[70]अरविंद के मन मे मुख्यमंत्री बनने की अदम्य लालसा है। चुनाव मे विजयी होकर वह विभिन्न प्रकार के भ्रष्टाचार, हिंसा, अनाचार और तिकड़म लगाकर मुख्यमंत्री बन जाता है।अरविंद अपने बचपन की सहपाठी और पहली प्रेमिका शची की आड़ में अनेक धृणित हथकण्डे अपनाता है और रास्ते के रोड़े बने हुए राजनीतिज्ञों को अपदस्थ करते हुए शची को शिक्षा उपमंत्री बना देता है। गुलाब जैसी सुंदर और पतिव्रता नारी के होते हुए भी वह शची और रेवन्यू मंत्री की पुत्री सत्या के साथ देह व्यापार करता है। अरविंद की सहायता से शची मुख्यमंत्री बन जाती है। शची को अरविंद अपने हाथ की कठपुतली बना रखना चाहता है,लेकिन ऐसा नहीं हो पाता है। वह शची को अपदस्थ कर फिर से मुख्यमंत्री पद पर आसीन हो जाता है। पद हासिल कर अरविंद मानसिक रूप से पीड़ित हो जाता है। अब तक किये गये राजनीतिक कुचक्रो और जधन्य अत्याचारों की मर्मव्यथा उसके मस्तिष्क में हीन ग्रन्थियों और कुण्ठाओं को जन्म देती है। इसके परिणामस्वरूप उसके सत्तालोलुप और महत्वकांक्षी चरित्र का अन्त होता है।

इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास की रचना द्वारा लेखक ने स्वातन्त्रोत्तर भारत की राजनीति के विघटनशील परिवेश और पतनशील नेतृत्व का यथार्थ चित्रण किया है।कथानक के विभिन्न घटना, चक्रो द्वारा देश की स्वातन्त्रोत्तरकालीन राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार, स्वार्थपरता, राष्ट्रद्रोहिता, दल-बदल,राजनीति की विडम्बनाओ, नेताओ के खोखले आदर्श, उनके व्याभिचार एवं हमारे बनावटी जीवन का लेखा-जोखा लेखक ने सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया है। " एक और मुख्यमंत्री' एक महाकाव्यात्मक श्रेष्ठ उपन्यास है। "[71]

xiv कटरा बी आर्जू -- डॉ॰ राही मासूम रजा --

'कटरा बी आर्जू' आपातकाल की पृष्ठभूमि को लेकर लिखा गया एक सफल उपन्यास है।प्रस्तुत उपन्यास में आपातकाल के समय सामान्य जनता पर किये गए अमानवीय अत्याचार, विरोधी स्वर दबाने की दमनपूर्ण नीति,पुलिस का अत्याचार,नगरों की खूबसूरती के नाम पर की गई, ज्यादतियाँ, जबर्दस्ती से नसबन्दी और परिवार नियोजन का निर्वाह आदि अत्याचारों का ह्रदयस्पर्शी एवं यथार्थ चित्र प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। "[72]

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने निम्न मध्यवर्गीय लोगों के आपसी सद्भाव मानवीय सम्वेदना से उत्पन्न परस्पर प्यार और सहानुभूति की भावना तथा उसकी आशा और आकांक्षाओ का प्रभावशाली चित्र वर्णित किये हैं।उपन्यास का घटना चक्र'कटरा मीर बुलाकी' नामक एक मौहल्ले के इर्द-गिर्द घुमता रहता है।यह मोहल्ला साम्प्रदायिक तनावों से मुक्त है जहाँ हिन्दू और मुसलमान एक साथ रहते हैं। सामाजिक सम्बंधों के साथ ही साथ यहाँ पारिवारिक और मैत्रीगत सम्बंध भी बहुत मूल्यवान और मानवीय है।आपातकाल की घोषणा होने से देशराज और बिल्लो जैसे सरलह्रदय टूट जाते हैं। शहनाज और मास्टर बदलहसन के स्वप्ने भी मिट्टी में मिल जाते हैं। आपातकाल के कारण सहज विश्वासनीय युवको को अमानवीय अत्याचारों का सामना करना पड़ता है। अपने मकान के स्वप्ने देखती हुई बिल्लो के टूटे-फूटे मकान पर भी बुलडोजर चलाया जाता है। तब वह अपने स्वप्नों के साथ टूटती हुई शहीद हो जाती है। अविवाहित बदलसहन की जबर्दस्ती नसबंदी कर दी जाती है। पुलिस आशाराम का पता पुछने के लिए देशराज पर अमानवीय अत्याचार करती है।"जगदम्बाप्रसाद ने पल भर पैरो को देखा फिर झाड़ू लेकर वापिस आये। उन्होनें वह देशराज के चूतड़ में खोंस दी, जहाँ अब भी तीन दिन पहले भरी जाने वाली मिर्च की जलन मौजूद थी। "[73] पुलिस के इन घोर अमानवीय अत्याचारो के कारण पहलवान देशराज पागल हो जाता है। इस प्रकार एक हस्ती-खेलती और आपस में प्रेम, सद्भाव रखने वाली बस्ती आपातकालीन अमानवीय अत्याचारो से उजड़ कर रह जाती है ।

लेखक ने उपन्यास के अन्त में तथा-कथित सम्पूर्ण क्रॉंति के नाम पर दलबदल कर जनता पार्टी में होने वाले स्वार्थी नेताओं की असलियत को उद्घाटित किया है। आपातकाल के उपरान्त इन्दिरा गॉंधी की पराजय होती है। केन्द्रिय राजव्यवस्था की बागड़ोर जनता पार्टी सम्भालती है। लेकिन कुछ ही समय में पार्टी के अन्तर्विरोध उभरने लगते हैं। जिसके परिणामस्वरूप पार्टी टूट जाती है। लेखक ने इस प्रकार राजनीति में पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के दुष्प्रभाव को उजागर किया है।

प्रस्तुत उपन्यास इमरजेंसी और उसके बाद की राजनीतिक स्थिति पर

करारा व्यंग्य है।यह मानवीय पीडाओं और लोगों की आशा-आकांक्षाओं को बलपूर्वक दबाकर उससे उत्पन्न पीड़ाओं का मार्मिक चित्र प्रस्तुत करता है।यह उपन्यास आपातकालीन अत्याचारों तथा उसके दुष्परिणामो की कटु यथार्थता को सफलता के साथ उद्घाटित करता है।

XV समय एक शब्द भर नहीं है -- धीरेन्द्र अस्थाना --

श्री धीरेन्द्र आस्थाना जी का यह लघु उपन्यास समकालीन मार्कसवादी चेतना और विचारो से गहन सम्बंध रखता है। लेखक ने नकसलवादियों के आंदोलन और किसानों का सरकार के विरूद्ध विद्रोह दर्शाया है।आज के युवा वर्ग में जागृत जन आन्दोलन की भावना का प्रभावशाली चित्रण किया है। लेखक ने प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु के द्वारा युवा पीढ़ी का नक्सलवादी आन्दोलन और सत्ता के अन्धेपन को दिखाया है। प्रस्तुत उपन्यास "किसी वाद विशेष की सिफारिश न करते हुए भी सच के उस महत्त्व को साफ करता है जो उसकी जन चेतना के लिए सबसे बड़ी जरूरत है। "[74]

नक्सलवादियों को सरकार जेलों में ठूँस रही थी, उनके साथ अमानवीय अत्याचार किये जा रहे थे । उनकी पिटाई इतनी अधिक की जाती थी कि उनके लिए जिन्दा रहना नामुमकिन-सा था। उनका केन्द्र-स्थल था कलकत्ता। राजधानी के लाल किले पर लाल झण्डा लहराने की तमन्ना रखने वाले नक्सलवादी का केन्द्र स्थल था।"[75] नैनीताल के एक होटल का मालिक आशू जो विचारों से कट्टर मार्क्सवादी है। एक हिन्दी का साप्ताहिक अखबार निकालता है- 'नैनीताल दर्पण' ।आशू जिस पार्टी को विलांग करता था उसके योद्धा, कॉलेजों, अदालतों, किसान- सभाओं, ट्रेड यूनियन और प्राध्यापकों से लेकर बस ड्राइवरों और बैंक कर्मचारियों तक फैले हुए हैं।[76] इस तरह ये लोग मार्क्सवादी विचारधारा के प्रबल समर्थक हैं।

उपन्यास का कथानायक भुवन किशोर है। उसके बचपन का नाम टेकचन्द था। बी. ए. करने के बाद टेकचन्द के विचार घरवालो से मेल न खाने के कारण, वह सम्पन्न परिवार को छोड़ देता है। टेकचन्द के पिताजी ने उसके एक नक्सली दोस्त को गिरफ्तार करवाया था।पुलिस के अमानवीय व्यवहार और अत्याचार के कारण इस मित्र की मृत्यु हो जाती है। नक्सलवादियों द्वारा टेकचन्द के पिता की इस वजह से हत्या कर दी जाती है, लेकिन टेकचन्द उर्फ भुवनकिशोर घर वापिस नहीं लौटता है। भुवनकिशोर देश की राजधानी दिल्ली आ जाता है। यहाँ आकर वह संघर्षशील जीवन के बीच अभ्यास और विभिन्न संस्थाओं में कार्यरत रहता है। तत् पश्चात भुवनकिशोर कलकत्ता चला जाता है। जहाँ पर वह साप्ताहिक में सहायक सम्पादक की पोस्ट पर नियुक्त होता है। यहीं पर रहते हुए उसे संगीता वैनर्जी नामक एक लड़की से प्यार होता है। किसी बात पर नाराज़ होकर एक दिन संगीता कलकत्ते से गायब हो जाती है।भुवनकिशोर उसके विरह में दु:खी

परेशान होकर नैनीताल जा पहुँचता है। यहाँ उसकी भेंट नक्सलवादी दोस्त आशू और संध्या से होती है। वह पुनः नक्सलवादियों से जुड़ जाता है। पुलिस सुपरिन्टेंडण्ट शमशेर सिंह की लड़की जया नक्सलवादी साहित्य का गहन अध्ययन करके बहुत प्रभावित होती है और उनके द्वारा चलाए जा रहे आन्दोलन में शामिल हो जाती है। इस आन्दोलन के दौरान भुवनकिशोर की भेंट अपनी प्रेमिका संगीता वैनर्जी से पुनः होती है। वह संगीता को आश्वासन देकर जुलूस में शामिल हो जाता है। यहाँ पर इन को खत्म करने के लिए गोलियाँ चला रही थी।

इस उपन्यास में लेखक ने नक्सलवादी आन्दोलन के कारणों एवं मूल स्त्रोत को टटोलने का प्रयत्न किया है। डॉ. देवेश ठाकुर के मतानुसार -- नक्सली आन्दोलन पर 'समय शब्द भर नहीं है' संभवतः हिन्दी में लिखी गई अपनी तरह की पहली रचना है।"[77]

xvi 'आधापुल' -- जगदीशचन्द्र --

'आधापुल' जगदीश चन्द्र का नवीन उपन्यास है जो सन् १९७३ ई०मे प्रकाशित हुआ था। यह आलोचना-जगत से अभी अछूता रहा है।अतःहिन्दी जगत के लिए अपरिचित सा है।युद्ध विषयक कथावस्तु पर आधारित आधापुल साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों के क्षेत्र में अपनी समर्थरचना धर्मिता और विशेषता के कारण महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

स्वातंत्र्योत्तर काल में भारत पर अपने ही पड़ोसी और मित्र देशो ने धोखे से युद्ध लादा। उस संकट की परिस्थिति से हमारे वीर नवयुवान सैनिकों ने अपना बलिदान देकर देश की सुरक्षा करते हुए, उसे गौरवान्वित बनाया। अतीत के इस कटु यथार्थ से नयी पीढ़ी को परिचित करवाते हुए लेखक ने उनमें नवीन राष्ट्रीय चेतना भरने का यत्न किया है।

'आधापुल' की कहानी बहुत सीधी,सरल अपितु रोचक है। इसकी रचना आज़ादी के बाद हुए भारत-पाकिस्तान युद्ध की घटना पर आधारित है। इसका कथानायक इलावत अपनी सादगी, कर्त्तव्यपरायणता, मृदुभाषिता,वाकपटुता, शौर्य तथा सह्रदयता के कारण सबका प्रिय पात्र था। इलावत की पोस्टिंग जब फील्ड एरिया में हुई तो वहाँ के कर्नल गिल की साली सेमी ग्रेवाल से उसका परिचय हुआ। यह परिचय धीरे-धीरे उन्मुक्त प्रणय व्यापार और गाढ सम्बंध में परिवर्तीत होता चला गया। युद्ध घोषित होने पर कैंप्टन इलावत अपने प्रेम को भूलाकर प्राणों की बाज़ी लगाते हुए अदम्य साहस का परिचय देता है। वह देश के लिए शहीद हो जाता है।कथावस्तु में कैप्टन इलावत और सेमी ग्रेवाल के बीच शुद्ध सात्विक प्रेम की अभिव्यक्ति मुखरित हुई है,लेकिन वह विवाह में परिणित नहीं हो पाती है।दोनों युवा प्रेमियों का साथ-साथ दीर्धजीवन जीने का सपना चकनाचूर हो जाता है।जगदीशचन्द्र ने एक ओर

कैप्टन इलावत के प्रति प्रेमिका सेमी ग्रेवाल का धनिष्ट प्रेम निरूपित किया है तो दूसरी ओर माँ पार्वती का अपने पुत्र के प्रति निःस्वार्थ मातृत्व-प्रेम को चरितार्थ किया है। वह ईश्वर से हर समय यही प्रार्थना करती है कि उसकी आयु भी पुत्र की आयु को लग जाये। "[78]

कहा जाता है कि कैप्टन इलावत वस्तुतः उपन्यास का नायक अवश्य है पर प्रकारान्तर से उपन्यासकार स्वंय ही उसके अधिक पास है क्योंकि भीषण जंग के दरम्यान सूचनाधिकारी रिपोर्टर के रूप में, युद्ध क्षेत्र में वे स्वंय उपस्थित रहे थे। अतः उपन्यास में समरभूमि का वर्णन, युद्ध क्षेत्र में सैन्य-जीवन तथा सैनिकों के व्यवहारों को अत्यधिक सूक्ष्मता के साथ चित्रित किया गया है। इसमें हमारे वीर सैनिको, सैन्य अधिकारियों के व्यवहारों, आदतों, क्रियाकलापो तथा उनके सामान्य जीवन का यथार्थ चित्रण लेखक के अनुभव संसार की देन है "[79]

लेखक ने युद्ध विषयक सम्वेदना का मार्मिक चित्रण करते हुए राष्ट्र प्रेम की सफल अभिव्यक्ति प्रस्तुत की है।'आधापुल'का कैप्टन इलावत देशप्रेमी युवा पात्र के रूप में चित्रित है जिसमें राष्ट्र-प्रेम का उदात्त रूप गहराता दिखाई देता है। "[80]

'आधापुल' उपन्यास में निरूपित चेतना --

जगदीशचन्द्र का 'आधापुल' राष्ट्रीय प्रेम के उज्जवल रूप को निरूपित करने वाला एक यथार्थपरक उपन्यास है। भारत-पाक. के युद्ध के अवसर पर लेखक सरकारी सूचनाधिकारी के रूप में रणक्षेत्र में उपस्थित था।अतः'आधापुल'की कथा को युद्ध के विषय पर केन्द्रित करके लेखक ने हमारे वीर सैनिको के साहस, शौर्य, बलिदान तथा उनकी राष्ट्र-भक्ति का प्रभावशाली चित्रण प्रस्तुत किया है। इसमें गहरे सम्वेदनात्मक स्तर पर राष्ट्र प्रेम की सफल अभिव्यक्ति हुई है। लेखक ने कैप्टन इलावत के चरित्र में एक राष्ट्र हित-चिन्तक के व्यक्तित्व का निरूपण किया है। कैप्टन प्रायःसैनिकों के मध्य राष्ट्र के प्रति भक्तिभाव एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठा की बातें किया करता है।वह सैनिको के साथ पितृवत् स्नेहभाव रखते हुए अपने पारिवारिक सदस्यों की भाँति व्यवहार करके उनमें अदम्य राष्ट्र-प्रेम भरता रहता है।वह कहता है कि"भारत देश के लिए, भारत की इज्जत-प्रतिष्ठा के लिए सरकार ने यह कार्य सौंपा है, उसे निभाना, देश की अखण्डता को आगे बढ़ाना हमारा काम है।"[81] दूसरी ओर लेखक ने कैप्टन के चरित्र को मानवीय सम्वेदना से परिपूर्ण रूप में चित्रित किया है। इसमें आम मनुष्य सी व्यक्तिगत सुख-दुःख की गहरी अनुभूति भी है, और सैन्य जीवन जीनेवाले हमारे सैनिक जवानों की तरह देशहित, राष्ट्र की सुरक्षा और सम्मान के लिए अपने प्राण न्यौछावर करके शहीद होने की तीव्र आकांक्षा भी है।इस प्रकार युद्ध-विषयक उपन्यासों की श्रृंखला में 'आधापुल'की महत्ता समसामयिक राष्ट्रीय सन्दर्भ में असंदिग्ध है।

'आधापुल'में एक गर्भित सन्देश यह भी प्रतीत होता है कि देश की जनता वीर सैनिकों के राष्ट्रप्रेम और राष्ट्रभक्ति से अवगत हो।आम मनुष्य की तरह वैयक्तिक सुख-दु:ख से उदासीन एवं पारिवारिक स्नेह भाव की आद्रता से दूर रहकर वीर जवान राष्ट्र की आन,बान, शान के लिए फना हो जाते हैं। इस उपन्यास के द्वारा हमारी नयी पीढ़ी सैन्य-जीवन की बारिकियों से अवगत होकर उनके बहुमूल्य योगदान के प्रति नतमस्तक हो। जिस परिवार के सपूत देश की सीमाओं पर अपने प्राण न्यौछावर करते हैं उन परिवारों के कष्ट,पीड़ा तथा मुसीबतों के प्रति उदार बनकर उनकी सहायता के लिए सदैव हम तत्पर रहें। वास्तव में यह उपन्यास सामाजिक जीवन से दूर रहने वाले सैनिकों और आम जनता के हृदयों को जोड़ने वाला सेतु है।हमारे वीर और देशभक्त नवजवानों के परिवारों की सहायता के लिए हम सेवारत रहें जिससे हम शहीदों के बलिदान को सच्ची श्रद्धांजलि दे सकें।

२. सामाजिक एवं आर्थिक चेतना ---

xvii'पचपन खम्भे लाल दीवारें' -- उषा प्रियंवदा

' पचपन खम्भे लाल दीवारें ' उषा प्रियंवदा जी का प्रसिद्ध सामाजिक उपन्यास है । लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु द्वारा आधुनिक युग की नारी के बहुमुखी व्यक्तित्व,उसकी सम्वेदनाएँ,पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन में नारी के महत्त्वपूर्ण योगदान, नारी के प्रति परम्परागत रूप से उपेक्षित एवं अन्यायपूर्ण सामाजिक दृष्टिकोण तथा इससे उत्पन्न नारी-हृदय की पीड़ा का सूक्ष्म चित्रण किया है। लेखिका ने नारी-जीवन की विडम्बनाओं का मार्मिक निरूपण करते हुए यह बतलाने का यत्न किया है कि पुरूष प्रधान भारतीय समाज में एक नारी का शोषण पुरूष द्वारा होना सहज है लकिन दुर्भाग्य से नारी ही नारी के शोषण का माध्यम बनती है। आधुनिक युग में शिक्षित नारी जब दोहरी जिम्मेदारियों का वहन करती है,तब आवश्यकता है कि समाज भी उनके प्रति सम्वेदनशील एवं न्यायपूर्ण दृष्टिकोण को अपनाये।

प्रस्तुत उपन्यास की नायिका सुषमा मध्यमवर्गीय परिवार की शिक्षित युवती है। वह गर्ल्स कॉलेज में व्याख्यता के रूप में काम करती है। अपनी योग्यता एवं कार्यकुशलता के बल पर वह कॉलेज की वार्डन नियुक्त हो जाती है।उसके पिता अपाहिज हैं। अत: छोटे भाई-बहनों की शिक्षा एवं उनके जीवन-निर्वाह की जिम्मेदारियाँ परिवार की बड़ी लड़की होने के कारण सुषमा ही उठाती है। वह परिवार की समस्त जिम्मेदारियों को बहुत अच्छी तरह

से निभाती है। कॉलेज में रहते हुए भी वह अपने काम से मतलब रखती है। कॉलेज के स्टाफ में मिस शास्त्री जैसी अध्यापिका भी है,जिनका काम ही दूसरों के जीवन में चंचुपात करना एवं अन्य लोगों की बुराईयों की चर्चा करना है।सुषमा इन बातों से अलग-थलग रहकर अपना काम बड़ी कुशलता से करती है। वह घर से दूर, होस्टल के वार्डन रूप में अकेली रहकर अध्यापन का काम करती है।

सुषमा, फिलिप्स कंपनी में काम करने वाले, नील नामक युवक से प्यार करती है। वह नील को अपने जीवन-संघर्ष और अपनी विवशता का परिचय देते हुए कहती है "नौकरी मेरे लिए बहुत कीमती है। निर्धन,मैं भले ही रही होऊँ,पर स्वाभिमानी भी बहुत रही। जीवन में कभी-कभी ऐसे अवसर भी आए,जबकि मैं अपने शरीर के मोल से धन और आराम पा सकती थी। पर वह मैंने स्वीकार नहीं किया।एम.ए. करने के बाद मैंने एक प्राइवेट कॉलेज में नौकरी की।वहाँ के सेक्रेटरी नगर के पुराने रईसों में थे। उन्होंने किस वस्तु का प्रलोभन नहीं दिया मुझे,पर मैंने वह नौकरी छोड़ दी।"[82]सुषमा का स्वाभिमानी हृदय परिवार के निर्वाह का बोझ उठाने से उतना दुखी नहीं था जितना अपने ही परिवार के लोगों के स्वार्थी व्यवहार से पीड़ित था। प्राइवेट कॉलेज की नौकरी छोड़ देने पर घर का हर सदस्य, सुषमा से बेरूखी रखते हुए अपनी तकलीफों के लिए उसे ही जिम्मेदार समझता था। इसलिए वह नील से कहती है आज विवाह करके परिवार को निराधार छोड़ देना मेरे लिए सम्भव नहीं है।

एक दिन सुषमा की माँ होस्टल में आकर उसके साथ रहती है। बेटी के सुविधायुक्त निवासस्थान को देखकर माँ के मन में लालसा हो उठती है कि छोटी बेटी के घर-गृहस्थी के लिए भी यहाँ से सामान जुटाया जाए। वह सुषमा से कहती है कि"होस्टल में कुरसी-मेजें बने तो घर के लिए कुछ सामान बनवा लो। पलंग, अलमारी, खाने की मेजें-सब देने में काम आएगा।"[83] माँ की बेईमानी सी बातों से सुषमा का प्रामाणिक मन रूष्ठ हो उठा। सुषमा के भावुक हृदय को अधिक दु:ख तब हुआ जब अपने प्रेमी नील के साथ छोटी बहन नीरू के विवाह की बात माँ ने कही। नील सुषमा से बेहद प्यार करता है और उसके सामने विवाह का प्रस्ताव भी रखता है। सुषमा भी हृदय की गहराई से यही चाहती है। लेकिन माँ की उदासीनता, घर की अभावग्रस्त परिस्थिति और उत्तरदायित्व के निर्वाह का ख्याल करते हुए वह अपने प्यार का बलिदान दे देती है। वह नील से कहती है "पहली बात तो नील यह है कि मेरी बहुत जिम्मेदारियाँ हैं।तुमसे कुछ छिपा नहीं है। पक्षाघात से पीड़ित बाबूजी, दो बहनें और भाई सब मुझे ही करना है। "[84]वह नील से विवाह करने के लिए इन्कार तो कर देती है,किन्तु नील से भी अधिक उसे ही इसका दु:ख होता है।

सुषमा की मज़बुरी है उसका परिवार तथा उनके प्रति उत्तरदायित्व के निर्वाह की गहरी सम्वेदना । वह अपने इस दायित्व को जीवन के अन्त तक निभाने के

लिए प्रयत्नशील रहती है।दूसरी ओर उसका परिवार है जो सुषमा के प्रति अपने उत्तरदायित्व से विमुख है।उन्हें तो केवल पैसे और भौतिक सुख-सुविधओं से ही लगाव है।छुट्टियों में घर आने पर सुषमा उनके लिए क्या लाई है,बस यही जानने की तीव्र इच्छा से उसके पूरे सामान को खोलकर रख देते थे।

लेखिका बताना चाहती है कि सुषमा आधुनिक नारी के रूप में अपनी योग्यता के बल पर समस्त परिवार के निर्वाह का उत्तरदायित्व सफलता से वहन करती है साथ ही आधुनिक नारी के जीवन में आंतर-बाह्य संघर्ष की सूक्ष्मता भी यहाँ दर्शायी गई है।

'पचपन खम्भे लाल दीवारें' उपन्यास में निरूपित चेतना --

उषा प्रियंवदा का 'पचपन खम्भे लाल दीवारें' नारी प्रधान,एक सामाजिक उपन्यास है। लेखिका ने आज के मध्यवर्गीय समाज में नारी के सामर्थ्य और उसके महत्त्व को स्थापित किया है। साथ ही नारी के प्रति सामाजिक परम्परावादी दृष्टिकोण के कारण उसकी दयनीय स्थिति, परिवार में हो रही उसकी उपेक्षा, उसकी मनोवेदना आंतरसंघर्ष और उसकी विवशता की पीड़ा को प्रभावशाली रूप में वर्णित किया है।

सुषमा इस उपन्यास की नायिका है। लेखिका ने सुषमा के चरित्र के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि आज परिवार की बेटी, माँ-बाप के लिए बोझ नहीं है और न ही नारी पुरूष प्रधान समाज में आश्रित जीवन की अधिकारीणी है। वह समाज की एक ऐसी महत्त्वपूर्ण कड़ी है, जो स्वावलम्बी जीवन की क्षमता तो रखती है, साथ ही आवश्यकता पड़ने पर अपने कोमल कन्धों पर पुरूष की तरह परिवार के उत्तरदायित्व का गुरू बोझ भी वहन करती है। मध्यमवर्गीय परिवार,उनकी बढती आर्थिक कठिनाइयॉ तथा पुरूष के साथ साथ उन्हें झेलती हुई नारी का चित्र लेखिका ने यथार्थ की ज़मीन पर प्रस्तुत किया है।[85] आज की शिक्षित नारी दोहरे उत्तरदायित्व का निर्वाह करती है।नारी जो कल तक घर की चार-दीवारों में सीमटी हुई थी, आज वह घर की समस्त जिम्मेदारियों का निर्वाह बड़ी कुशलता से कर सकती है। नारी ने आज यह सिद्ध कर दिया है कि वह समाज के हर क्षेत्र में अपनी सक्रिय भूमिका द्वारा महत्वपूर्ण योगदान देने का सामर्थ्य रखती है।

दूसरी ओर, नारी आज भी सामाजिक मर्यादाओं मान्यताओं तथा परम्परावादी दृष्टिकोण के कारण दयनीय जीवन जीने के लिए विवश है। समाज ने उसके स्वतन्त्र व्यक्तित्व, उसकी रूचि-अरूचि तथा अपनी इच्छानुसार जीवन जीने की स्वतन्त्रता आज भी मान्य नहीं की है। यह स्वस्थ्य समाज का लक्षण नहीं कहा जा सकता। सुषमा को परिवार के सुख के लिए अपनी हर खुशियों का बलिदान देना पड़ता है। नील जिससे वह प्यार करती थी, उसके साथ विवाह करके जीवन की खुशियाँ प्राप्त करने का सौभाग्य भी उसे

नसीब नहीं होता है।

इस प्रकार लेखिका ने आधुनिक युग की भारतीय नारी की सामाजिक, आर्थिक विवशताओं से जन्मी मानसिक यन्त्रणा का बड़ा मार्मिक चित्रण किया है। [86]

प्रस्तुत उपन्यास में, समाज का दूसरा दूषण भी उभर कर सामने आता है। वह है समाज का भोगवादी दृष्टीकोण। सुषमा की माँ, बेटी के प्रति प्रेम और सहानुभूति न रखकर उसके सुख-सुविधाओं को छीनने का यत्न करती है। आज सामाजिक सम्बन्धों में कटुता का यह भी प्रमुख कारण है। आज मानव-जीवन में अर्थ और उसके भोग का इतना अधिक महत्व बढ गया है कि पारस्परिक प्रेम की अनुभूति के लिए कोई स्थान रिक्त नहीं रह गया है। इसी से आधुनिक जीवन में निराशा, ऊब, छटपटाहट, संत्रास और अकेलेपन की अनुभूति अधिक भर गई है।यह स्थिति स्वस्थ और सशक्त समाज की पक्षधर नहीं कहीं जा सकती।

'पचपन खम्भे लाल दीवारें' आधुनिक नारी के जीवन की आंतर-बाह्य झाँकी को बड़े सशक्त रूप से प्रस्तुत करता है। देश के बदलते हुए परिवेश में नारी के महत्त्वपूर्ण योगदान को निरूपित करके नये सामाजिक मूल्यों की आवश्यकताओं को उजागर किया है।भारतीय समाज में नारी को योग्य स्थान मिलना अभी शेष है। लेखिका ने देश के स्वस्थ समाज के निर्माण हेतु एक ओर नारी-जीवन की पीड़ा और त्रासदी को उजागर किया है तो दूसरी ओर सामाजिक जीवन में नारी के योगदान की महत्ता को दर्शाया है।

xviii 'नदी फिर बह चली' -- हिमांशु श्रीवास्तव --

'नदी फिर बह चली' उपन्यास में हिमांशु श्रीवास्तव जी ने ग्रामीण क्षेत्र की जागृत नारी के जीवन-संघर्ष का प्रभावशाली परिचय दिया है। यह रचना बिहार के ग्रामीण जीवन से संबंधित एक आँचलिक उपन्यास है।"इस उपन्यास में ग्रामीण तथा शहरी जीवन के बदलते जीवन-मूल्यों को साठोत्तर युग के संदर्भ में चित्रित किया गया है।"[87]

नायिका-प्रधान इस उपन्यास की प्रमुख नारी पात्र है परबतिया। उसके पिता का नाम साधु महतो है, जो हलकारे का काम करता है। बेटी के जन्म के कुछ ही साल में साधु महतो की पत्नी का स्वर्गवास हो जाता है। अतः निर्दोष और मासूम बच्ची के पालन - पोषण की चिन्ता से साधु महतो दु:खी रहता है। इसका निराकरण परबतिया के नाना द्वारा होता है। वे पौत्री को अपने साथ ननिहाल ले आते हैं। लेकिन दुर्भाग्य से मामी को वह एक आँख भी नहीं भाती है। परबतिया चुपचाप उसके कटुवचनों और अत्याचारों को सहती है।

परबतिया के पिता, बेटी के खातिर इच्छा न होते हुए भी अपनी विधवा साली के साथ विवाह कर लेते हैं। परबतिया की इस नई माँ में सौतेली माँ के सभी गुण मौजुद

हैं, जो परबतिया के बाल हृदय में निराशा और अवसाद भर देते हैं। सौतेली माँ के अत्याचारों के कारण जल्द ही परबतिया का विवाह शराबी जगलाल के साथ कर दिया जाता है। वह पटना में ड्राइवर की नौकरी करता है। परबतिया को जब इस बात का पता चलता है कि जगलाल अपने भईया-भाभी को अपनी आय से एक पैसा भी नहीं देता है,तो वह उसे सलाह देती हैकि वह अपने भईया-भाभी को कुछ रूपये जरूर भेजा करें। जगलाल को आशंका होती है कि भाई-भाभीने पैसे के लालच में पत्नी परबतिया से कुछ कहा होगा। अतः वह प्रश्न करता है कि "क्या मेरे पीछे, वे लोग तुझे कुछ कहते हैं?"परबतियॉ आदर्श पत्नी की तरह प्रत्युत्तर में कहती है कि "कहते तो कुछ नहीं, मगर यह तो तुम्हारा फर्ज हैं।"[88] यहॉ एक अनपढ़ नारी के चरित्र में, आदर्श भारतीय नारी के कुशल और उदात्त स्वरूप को देखा जा सकता है। परबतिया परिवार में परस्पर मेल और स्नेह - भाव को बनाये रखने का यत्न करती है।

जगलाल परबतिया को अपने साथ पटना ले आता है।न चाहते हुए भी परबतिया इसलिए चली आती है, जिससे की वह पति की गलत आदतों को छुड़वा सके। शहर के उन्मुक्त वातावरण में उसका व्यक्तित्व भिचा-भिचा सा रहता है और वह प्राचीन ग्रामीण संस्कारों व दायरों में सिमटी रहती है। उसका पति जगलाल शहरी स्वच्छन्द वातावरण का आदि होता है। वह मूल्यहीन जीवन जीते हुए शराब पीता है, जुआ खेलता है और परबतिया से भी अपेक्षा रखता है कि वह भी उसके मित्रों-गुलाब और नथ्थू के साथ मुक्त व्यवहार करे। उनके सामने श्रृंगार करे,उनको रिझाये। पति के इन आधुनिक विचारों को परबतिया सहज रूप से नहीं स्वीकार पाती। अतःपति-पत्नी में कई बार मनमुटाव और लड़ाई-झगड़े भी होते हैं। फिर भी वह अपने निर्णय पर अटल रहती हैं। जगलाल दिन-प्रतिदिन बुरी आदतों की गर्त में डूबता चला जाता है।इनके दुष्परिणाम स्वरूप एक दिन गुलाब नामक ड्राइवर को छुरा मार कर की गई हत्या के जुर्म में उसे जेल हो जाती है।

परबतिया अपने आपको शहर में अकेली और निस्सहाय पाकर वापिस अपने गॉव लौट आती है। गाँव में आकर देखती है कि स्थानिक नेतागण जनता की भलाई के लिए चिन्तित नहीं हैं। वे स्वार्थ, अधिकार और जातीय गठन के लिए जीते-मरते हैं। एम.एल.ए. और उसके आदमी गाँव में अपनी मनमानी करते हैं। गरीब और मज़बूर किसान की गाँव में कोई इज्जत नहीं है। गाँव के इस विकृत सामाजिक रूप को देख परबतिया के जीवन में बदलाव आता है। वह मगनलाल जैसे युवा लोगों के सम्पर्क में आती है। किसानों और मज़दूरों के लिए संघर्ष करती है। परबतिया का जीवन यहाँ आकर व्यक्तिगत स्वार्थो से ऊपर उठकर नया सार्वजनिक रूप ले लेता है। मज़दूर संघ बनाकर वह उनकी नेता बन जाती है। वह गाँव में घर-घर जाकर नारी-जागरण का संदेश देती है। परबतिया द्वारा हो रहे लोकोपकारक

कार्य से स्थानिक अग्रणी अप्रसन्न होकर उसके कार्य में विघ्न डालते रहते हैं। वह अनेक प्रकार के विघ्नों और मुसीबतों को सहते हुए भी अपने लक्ष्य की ओर आगे बढ़ती रहती है। वह एक सुदृढ़ मनोबल और कार्य के प्रति निष्ठावान जागरूक नारी के रूप में दिखाई देती है। परबतिया के इस उदात्त सेवाकार्य के प्रति गाँव के लोगों में कुतूहल बना रहता है। एक ग्रामीण महिला कहती है कि "परबतिया के पास को एक धुर की भी ज़मीन नहीं है, वह क्यों सरकार के खिलाफ दौड़-धूप कर रही है? तब परबतिया कहती है "मेरे पास एक धुर की ज़मीन नहीं है तो क्या, आखिर मैं किसान और मज़दूरों की ही बहू-बेटी हूँ। आगे बढ़कर रोटी - रोजी के लिए लड़ने के सिवा हमारे पास रास्ता क्या है ? हम थक कर बैठ नहीं सकते।" [89]

किसानों और मज़दूरों के हकों की लड़ाई का नेतृत्व करती हुई वह पटना पहुँचती है। वहाँ पहुँचकर मज़दूरो और किसानों के अधिकारों के लिए वह आवाज उठाती है।पुलिस द्वारा इस बढ़ते हुए आन्दोलन को रोकने और उसे असफल बनाने के लिए अश्रु गैस छोड़ी जाती है।जगलाल भी उस समय वहाँ पहुँचकर परबतिया को खोजता है। जगलाल की यह खोज उसके हृदय परिवर्तन और पश्चाताव की मानसिक स्थिति को चित्रित करती है। पुलिस के साथ संघर्ष की इस घटना में पुलिस की लाठी से घायल होकर परबतिया की मृत्यु हो जाती है।

लेखक ने उपन्यास के अन्त में यह दिखाया है कि परबतिया की मृत्यु आशा और उत्साह के परिवेश में होती है ; निराशा और हिम्मत हारने वाली स्थिति मे नहीं। इस प्रकार नारी-समाज में नई चेतना के बीजांकुर को निरूपित किया गया है।

'नदी फिर बह चली' उपन्यास में निरूपित चेतना --

'नदी फिर बह चली' हिमांशु श्रीवास्तवजी का नायिका प्रधान आँचलिक उपन्यास है। लेखक ने परबतिया के कार्य-कलापों द्वारा नई पीढ़ी में जन-जागरण का शंख फूँका है। यह दिखाया है कि नई पीढ़ि को भ्रष्ट राजनीति में न पड़कर विशाल जन-समूह की सुख - शान्ति और स्मृद्धि के लिए संघर्ष करना चाहिए। नारी-चेतना की जागृति केवल देश के शहरों तक सीमित न रहकर गाँव में भी व्याप्त हो गई है, जिसका सशक्त उदाहरण अशिक्षित ग्राम्य नारी परबतिया के द्वारा निरूपित किया गया है। "परम्परागत संस्कारो से युक्त आज की भारतीय नारी समाज द्वारा सताने पर या आर्थिक संकट तथा राजनीति के दबाव के कारण सामाजिक मूल्यों को नकारने लगी है। " [90] लेखक ने आज की नारी के परिवर्तित स्वरूप का परिचय उपन्यास की नायिका परबतिया के माध्यम से करवाया है।

आधुनिक काल में समाज के पिछड़े और गरीबों के लिए न्याय प्राप्ति के प्रयत्न

में स्त्री का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है। पुरूष की भॉति नारी में भी समाज के परम्परागत संकीर्ण ढॉचे के प्रति विद्रोह की भावना विद्यमान है।चाहे वह शिक्षित नारी हो या अशिक्षित, अब वह अन्याय के विरोध में सक्रिय हो चुकी है।

विवाह के बाद परबतिया जगलाल को घर में पैसे देने के लिए प्रेरित करती है। पति को उसके कर्तव्यो की याद दिलाती है। यहॉ लेखक ने भारतीय नारी के आदर्श रूप को चित्रित किया है। दूसरा लेखक ने यह संकेत भी दिया है कि संयुक्त परिवार में रहने वाली महिलाओं को किस प्रकार घरेलू-कलह को दबाने की चेष्टा करनी चाहिए।

पटना आने पर जगलाल परबतिया को अपने दोस्तो के समक्ष साज-श्रृंगार करने को कहता है,परन्तु वह साफ इन्कार कर देती है। वह जगलाल को सुधारना चाहती है। हम देखते है कि परबतिया अपने कुसंस्कारी पति के साथ रहती अवश्य है मगर उसके कुसंस्कारों को अपने ऊपर हावी नहीं होने देती है। लेखक ने परबतियाँ को एक आदर्श पत्नी के रूप में चित्रित किया है। शहरी जीवन की आधुनिकता की कुरीतियों के बीच परबतिया संघर्ष तथा कुठां की शिकार हो जाती है। जगलाल भी आधुनिकता के भावबोध से पीड़ित होकर कुंठा, तनाव, हीनभावना से ग्रस्त हो जाता है। हत्या के अपराध में जगलाल को जेल होने पर परबतिया वापिस अपने गाँव लौट आती है। गाँव में आकर परबतिया अपने दु:खी और एकाकी जीवन को नया मोड़ देती है। वह किसानों और मज़दूरों को एकत्रित कर अन्याय और अधिकारों के प्रति आवाज़ उठाती है। परबतिया एकता का प्रतीक है। वह जन - जीवन की सुख-शान्ति के लिए अपने जीवन को समर्पित कर देती है। " इस प्रकार यह उपन्यास नारी की जागरूक चेतना-शक्ति का चित्रण करता है। यद्यपि इसमें व्यक्तिगत जागरूक चेतना के साथ-साथ देश की सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक व परम्परागत सभ्यता व संस्कृति को भी स्वीकार किया गया है। " [91]

उपन्यास में बदलते जीवन मूल्यों को बड़ी बारिकी के साथ चित्रित किया गया है। शहरी जीवन के साथ-साथ ग्रामीण जीवन में भी बदलाव देखा जा सकता है। यह बदलाव सामाजिक और राजनीतिक दोनों रूपों में देखने को मिलता है। आज़ादी के बाद हमारे गाँव के जीवन में एक नवीन चेतना का उदय हुआ है। उनमें अपने अधिकारों के प्रति सजगता देखने को मिलती है। आज भारत के गाँव मौन रहकर निरन्तर अन्याय को सहने की स्थिति में नहीं रहे हैं, बल्कि उनमें संगठित होकर अन्याय का सामना करने का हौसला पैदा होता जा रहा है। जागरण की यह लहर न केवल पुरूष वर्ग तक ही सीमित है, वरन परबतिया के रूप में नारियों में भी देखी जा सकती है। नारी चाहे गाँव की हो,वह अशिक्षित हो, चाहे शहर की शिक्षित महिला,आज परम्परागत बन्धनों का परित्याग कर नयी-चेतना से ओतप्रोत हो रही है। "भारत के सांस्कृतिक आदर्शो से निर्मित, नये आह्वान को समाहित

कर, नयी चेतना को प्रतिफलित करने वाली अटूट नारी है। "[92] परबतिया अदम्य साहस और शक्ति से जूझनेवाली नारी है। लेखक ने आधुनिक युग की नारीमें एक विशिष्ट समन्वयको उजागर किया है। वह एक ओर देश की सांस्कृतिक घरोहर को जीवित रखती है तो दूसरी और वैज्ञानिक युग के नये भावबोध को स्वीकार करती है।इस प्रकार आधुनिक नारी के प्रतीक के रूप में परबतिया के नारी-चरित्र को देखा जा सकता है।

xix 'अन्धेरे बन्द कमरे' -- श्री मोहन राकेश

'अन्धेरे बन्द कमरे' श्री मोहन राकेश जी का बहुचर्चित उपन्यास है। नारी प्रधान इस उपन्यास में लेखक ने आधुनिक युग की मध्यमवर्गीय नारी के निर्भिक, स्वतंत्र आत्मनिर्भर एवं विकासोन्मुखी व्यक्तित्व का चित्रण किया है। साथ ही लेखक स्नेह, सेवा और समर्पण की आंतरिक विशेषताओं को उजागर करके नारी के गौरवपूर्ण जीवन का परिचय देते हैं।

प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु हरबंस और उसकी पत्नी नीलिमा के पारस्परिक सम्बंधों की विभिन्न स्थितियों से सम्बंधित है।

हरबंस चाहता है कि उसकी पत्नी नीलिमा चित्रकला के क्षेत्र में रूचि ले,पर वह नृत्य सिखना अधिक पसन्द करती है। हरबंस के चाहने पर भी वह स्वयं को चित्रकला की ओर नहीं मोड़ पाती। इसी कारण से दोनों में मनमुटाव और तनाव बढ़ जाता है। दोनों के आपसी मतभेद इतने अधिक बढ़ जाते हैं कि हरबंस,पत्नी नीलिमा को भारत में छोड़कर स्वंय इग्लैंड चला जाता है।

हरबंस के चले जाने पर भी नीलिमा अधिक दुखी नहीं होती है। उसे विश्वास है कि हरबंस अधिक दिनों तक अकेला रह नहीं पाएगा। विदेशयात्रा के दरम्यान ही हरबंस नीलिमा को मार्मिक पत्र लिखता है। नीलिमा के पति को अकेलापन खटकने लगता है वह चाहता है कि उसकी पत्नी भी उसके साथ आकर रहे। लेकिन नीलिमा को इस समय अपने व्यक्तित्व के विकास की आवश्यकता महसूस हो रही थी। वह भरतनाट्यम् की शिक्षा प्राप्त करके ही इंग्लैण्ड जाना उचित समझती है।

इंग्लैण्ड पहुँचकर पुन: दोनों में आपसी मतभेद और वैचारिक असंवादिता उत्पन्न हो जाती है। वह आर्थिक रूप से पति को सहायता जुटाने के लिए बेबी सिटिंग का काम करती है। इसी बीच नीलिमा का परिचय उमादत्त से होता है। वह अपनी नृत्य और संगीत की मण्डली के साथ पेरिस की यात्रा के लिए जा रहा था। नीलिमा भी उसके साथ पेरिस जाने का उपक्रम बनाती है। हरबंस पत्नी के इस निर्णय से दुखी है लेकिन नीलिमा अपने व्यक्तित्व के विकास के लिए हर अवसर का उपयोग करना चाहती है। उसमें एक ऐसी तितिक्षा है कि वह अपनी एक अलग पहचान बनाये।

पेरिस-यात्रा के दरम्यान नीलिमा की पहचान एक बर्मी कलाकार 'ऊबानू' से होती है। दोनो में घनिष्ट सम्बंध स्थापित होते हैं लेकिन नीलिमा अपने सतीत्व की सुरक्षा बनाये रखती है। प्रिय मित्र ऊबानू,जब मैत्री-सम्बंधों की सीमा का उल्लंघन करने लगता है, तब नीलिमा उसे रोकते हुए कहती है "तुम अपनी पत्नी से नेक चलनी की आशा क्यों रखते थे? तुम भी तो नेक चलन नहीं हो, अगर वह इस समय अचानक आकर तुम्हारे सामने खड़ी हो जाए, तो तुम्हें कैसा लगेगा "[93] विदेश के मुक्त-सम्बंधों के परिवेश में भी भारतीय नारी के रूप में नीलिमा अपने शील और धर्म का पालन करती है।

हिन्दुस्तान वापिस लौटने पर दिल्ली 'कला निकेतन' द्वारा नीलिमा का एक नृत्य समारोह आयोजित किया जाता है। इस कार्यक्रम की सफलता की पूर्वभूमिका के रूप में वह घर पर एक पार्टी का आयोजन करती है। हरबंस और पत्रकार मधुसूदन भी अपना सहयोग प्रदान करते हुए कार्यक्रम की टिकिटें बेचने का यत्न करते हैं। नीलिमा ने घर की चार दिवारी से बाहर कदम रखकर, अपने व्यक्तित्व की एक अलग पहचान बनाई है। वह आधुनिक विचारों के अनुरूप पुरूष-मित्रों के सम्बंध को बुरा नहीं मानती है।

कथावस्तु के अन्त मे नृत्य-समारोह की असफलता के परिणामस्वरूप पति-पत्नी में पुनः संघर्ष उत्पन्न हो उठता है। इस बार नीलिमा स्वंय घर का त्याग करती है लेकिन पति की अस्वस्थता का सामाचार पाते ही पुनः घर वापिस लौट आती है। इस प्रकार पति के प्रति स्नेहभाव और सेवाभाव रखनेवाली एक भारतीय गृहिणी का आदर्श रूप चित्रित किया गया है। आधुनिक मुक्त जीवन के प्रभाव से सम्बन्ध विच्छेद की समस्या तथा परम्परागत संस्कारों द्वारा निराकरण को लेखक ने प्रतिपादित किया है।

'अन्धेरे बन्द कमरे' उपन्यास मे निरूपित चेतना --

श्री मोहन राकेश जी का 'अन्धेरे बन्द कमरे' भारतीय समाज के बदलते हुए स्वरूप की एक सूक्ष्म एवं यथार्थ पहचान है।समकालीन भारतीय समाज, पश्चिमी संस्कारों से प्रभावित होकर आधुनिकता के मोह में पुरूष और स्त्री की समानता का दिखावा करता है। लेकिन आज भी पुरूष अपनी बौद्धिक और सामाजिक श्रेष्ठता के अहम् से न तो मुक्त हो पाया है और न ही अपने अधिकार-लालसा से वंचित हो सका है। परिणामस्वरूप मध्यवर्गीय परिवार, पति-पत्नी के दाम्पत्य सम्बन्धों की सहज रागात्मकता, उष्मा, अर्थवत्ता को खोकर भटक रहा है। "मध्यवर्ग या उच्चवर्ग की यह नियति है कि पुरूष स्त्रियों को छूट तो देता है,उन्हें विशिष्ट तो देखना चाहता है किन्तु एक सीमा तक।इस सीमा को वह स्वयं निर्धारित करना चाहता है किन्तु भीतर-भीतर यह चाहकर भी सभी से कह नहीं पाता। यहीं से परस्पर के संघर्ष और तनाव के बिन्दु बढ़ते हैं । दूसरी ओर नारी और उसका अंह जानबूज कर उन सीमाओं का अतिक्रमण करने लगते हैं।"[94]लेखंक ने हरबंस और नीलिमा के माध्यम

से पारस्परिक ईमानदारी, भावनात्मक लगाव और मानसिक समदृष्टि से रिक्त पारस्परिक संबंध, दाम्पत्य जीवन की कटुता आदि का प्रभावशाली चित्रण किया है।

आधुनिक समाज में दाम्पत्य जीवन के पारस्परिक सम्बंधों में कटुता और रिक्तता के मूल में बौद्धिक स्तरीय आधुनिकतावाद और आंतरिक स्तर पर अपनी परंपरागत संस्कारों की टकराहट है। लेखक ने समकालीन नये परिवेश से उत्पन्न भारतीय समाज की विघटनकारी समस्या का प्रभावशाली निरूपण किया है। सम्भवत: पहली बार हिन्दी उपन्यास में विवाहित जीवन की अर्थहीनता का सशक्त तथा सजीव चित्रण हुआ है। "[95]

प्रस्तुत उपन्यास में आधुनिक युग के परिवर्तित सामाजिक परिवेश का यथार्थ प्रतिबिम्ब पाया जाता है। यह युग बौद्धिक विकास का युग है।मनुष्य अपनी बौद्धिक विकास के सहारे अपनी अलग पहचान बनाने के लिए जीवनभर प्रयत्नशील एवं संघर्षरत रहता है। भारत के पुरूषप्रधान समाज में पुरूष की पहचान समाज के प्रमुख अंग के रूप में रही है। आज छोटा, बड़ा हर मनुष्य एक-दूसरे से हटकर-कटकर अपनी अलग पहचान के लिए सजग है। समकालीन आधुनिक परिवेश की यह प्रमुख देन कहीं जा सकती है,कि जो नारी सदियों तक पुरूष के आधीन रहकर,उसकी सेवा में अपने आपको समर्पित करके जीवन की सफलता अनुभुत करती थी,वह आज अपने अस्तित्व कि अलग पहचान स्थापित करने के लिए पुरूष से निरंतर संघर्षशील दिखाई देती है।लेखक ने उपन्यास की नायिका नीलिमा के चरित्र-चित्रण द्वारा आधुनिक युग की नारी का आत्मनिर्भर एवं विकासोन्मुखी स्वतंत्र व्यक्तित्व की पहचान दी है। आज की नारी व्यक्तित्व हीन,पराधीन,अबला और भोग की सामग्री मात्र नहीं है। वह संघर्षो में पली, बढ़ी,समाज का एक ऐसा गौरवपूर्ण अंग बनी हुई है जो स्वतन्त्र व्यक्तित्व-निर्माण के साथ-साथ देश के विभिन्न क्षेत्रों के विकास में अपना बहुमुल्य योगदान देने की क्षमता रखती है। लेखक ने पति-पत्नि के नाजुक सम्बंधों में रागात्मकता का अभाव, संबंध-विच्छेद और पारिवारिक बिखराव की परिस्थिति का परिचय देते हुए भारतीय सामाजिक जीवन पर आये संकट की ओर संकेत किया है।

XX धरती धन न अपना -- जगदीश चन्द्र

'धरती धन न अपना' जगदीश चन्द्र जी का एक बहुचर्चित उपन्यास है। लेखक ने उपन्यास की कथावस्तु द्वारा अछूतों के यातनापूर्ण जीवन-संघर्ष का यथार्थ निरूपण किया है। ग्रामीण इलाको में रहने वाले दीन-हीन अछूतों की, पीड़ाओं, यातनाओ और कष्टों का इसमें विस्तृत चित्रण किया है।

प्रस्तुत उपन्यास के केन्द्र में पंजाबी अंचल के एक छोटे से गाँव 'घोड़ेवाहा' का चित्रण है। इस गाँव में रहनेवाले लोग मुख्यत: दो प्रकार के वर्ग में रखे ज़ा सकते हैं।

एक वर्ग ज़मींदार चौधरियों का है, जो गॉव की अधिकांश ज़मीन के मालिक हैं। वे क्रूर,निर्दयी और अत्याचारी हैं। 'घोडेवाहा' में समाज का दूसरा वर्ग भूमिहीन गरीबों का है, जो आये दिन जमींदारों के अत्याचारों का शिकार होकर पीड़ा और यातनापूर्ण जीवन जीने के लिए विवश हैं।

उपन्यास की कथावस्तु का नायक 'काली' गरीबी से तंग आकर, पैसे कमाने शहर चला गया था। काफी पैसे इकट्ठा करके छ: साल बाद वह पुन: गाँव लौटा है। गाँव में एक दिन अपनी ही जाति के 'जीतू' की चौधरी हरनाम सिंह द्वारा निर्मम पिटाई होते देखता है। उसे अपने बचपन के दिन याद आ जाते हैं। कई बार चौधरियों ने उसे भी इस प्रकार बेरहमी से पीटा था, लेकिन तब बात आम लगती थी। आज उसका खून खौल उठा, फिर भी अपने आपको वश में रखकर चुप रहा। चौधरी हरनाम सिंह सिर्फ जीतू को पीटकर ही शान्त न रहा, वह वहॉ उपस्थित सभी को धमकी देते हुए कहता है "अगर फिर किसी ने फसल का इस तरह नुकसान किया तो सारी चमादड़ी को ज़मीन पर उल्टा बिछाकर पिटवाऊँगा।"[96]

काली का सपना था कि वह चमादड़ी के कच्ची झोपड़ियों के बीच, चौधरियों के मकानों जैसा अपना एक पक्की कोठी बनाये। शहर से लायी हुई समस्त धन-राशि, मकान बनाते-बनाते पुरी हो जाती है। वह लोगो से पैसे की मदद माँगता है, लेकिन कोई उसकी सहायता नहीं करता है। धन के अभाव में काली को पुन: चौंधरियों के खेतों में मज़दूरी का काम करना पड़ता है।

एक बार भारी वर्षा के कारण गाँव बाढ़ की चपेट में आ फॅसता है। बढ़ते पानी को रोकने के लिए बलि भी दी जाती है।लेकिन संकट से मुक्ति नहीं मिलती है। लालू पहलवान ने सलाह दी की बाँध तोड़ दिया जाए,लेकिन अपनी फसल की बर्बादी की चिंता करते हुए चौधरी सहमत नहीं होते हैं। किसी प्रकार उनको समझा बुझा कर गाँव को बचा लिया जाता है।चौधरी अब चाहते है कि चमार उनके यहाँ बिना'ध्याड़ी' के काम करे। काली साफ इन्कार कर देता है, तब चौधरी उसे गालियाँ देने लगता है। काली प्रत्युतर में कहता है कि "चौधरी, ये गालियाँ मुझे भी आती हैं। मुँह संभालकर बात कर। हम मेहनत बेचते हैं, इज्जत नहीं। माएँ - बहने सबके घर में हैं। "[97] काली का जवाब सुनते ही कई चौधरी भड़क उठते हैं। वे चमारों को धमकाते हुए कहते हैं "इनका खेतो में आना जाना बन्द कर दो। 'इनकी औरतें खतों मे आयें तो उन्हें वहीं घेर लो।' 'चमार खेत में आये तो साले को जान से मार दो, कुत्तें चमारों, तुम एड़ियॉ रगड़ - रगड़कर मरोगे। हम तुम्हें मार देंगे ।"[98] काली का स्वाभिमान जाग्रत हो उठता है। वह निर्भय होकर अपने आत्म - सम्मान की रक्षा करते हुए कहता है " चौधरियों, आदमी किसी का राज़क नहीं है। हमारा रज़क भी वही है जो तुम्हारा है। तुम लोगों को ज़मीनों का अहंकार है।...... हमने तुम्हारी बहुत बातें सुन ली हैं, लेकिन हर चीज़ की हद होती है। हम पत्थर नहीं हैं, हम भी इन्सान हैं।"[99] परिणाम स्वरूप चौधरी और चमारों के बीच मालिक और गुलाम सा सम्बन्ध टूट जाता है।

चौधरी और चमारों के बीच का यह संघर्ष कुछ समय तक जारी रहता है। अत: चमारों की दशा और भी बिगड़ती जाती है। घर में अनाज के अभाव मे छोटे बच्चे भी भूख से बिलकते हैं। काली गाँव के कई संपन्न लोगों से सहायता की भीख माँगता है,लेकिन उसे किसी की मदद नही मिल पाती। परिणामस्वरूप हारकर चमादड़ी के हरिजनों को चौधरियों के पास जाने के लिए विवश होना पड़ता है।चौधरी भी उनकी मजबूरी का लाभ उठाकर समझौते के लिए राज़ी हो जाते हैं।

ज़मींदारों से संघर्ष करते करते हारा हुआ काली अपने प्रेम को पाने में भी असफल रहता है।काली अपनी प्रेमिका की मृत्यु की खबर सुनकर जीवन से निराश और हताश काली अन्त में कहाँ चला जाता हैं यह एक प्रश्नचिन्ह बन जाता हैं।

इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में समाज के पिछड़े वर्ग के लोगों की दयनीय दशा,माजिक,आर्थिक शोषण,उनके जीवन की पीड़ाएँ-यातनाएँ तथा जीवन भर संघर्ष करके भी चन्द खुशी के क्षण न पानेवाले गरीबों के करूण अन्त की कथा यहाँ प्रस्तुत है।

'धरती धन न अपना' उपन्यास में निरूपित चेतना

हिन्दी के आँचलिक उपंयासों में जगदीश चन्द्र कृत'धरती धन न अपना'का महत्त्वपूर्ण स्थान है। 'धरती धन न अपना' में लेखक ने पंजाब के एक छोटे से गाँव को केन्द्र मे रखकर साधनहीन,पराश्रित,भाग्यवादी,अनपढ़ तथा अभावों से पीड़ित हरिजानों के जीवन का ऐसा अन्तरंग चित्रण किया है कि उनकी आशा-आकाक्षाएँ,उनके आचार व्यवहार,उनकी आस्थाएँ-परम्पराएँ अपनी समग्रता से मूर्तिमान हो उठे हैं।"[100]लेखक ने समाज में फैली हुई वर्ग संघर्ष एवं अस्पृश्यता की समस्या को बड़े सजीव रूप में तथा व्यापक फलक पर प्रस्तुत किया है।

देश की सामाजिक व्यवस्था का ढ़ाचा आज चरमरा गया है। सदियों पुरानी इस व्यवस्था में मानव मूल्यो का हास हुआ हैं।अत उनका गौरव और उनकी सामाजिक उपयोगिता अब नष्ट हो चुकी है।

आघुनिक युग में अर्थ की प्रधानता से समाज को मुख्यत:दो भागों में विभाजित कर रखा हैं।एक अर्थसम्पन्नता रखने वाला वर्ग-इस वर्ग के लोगों के पास कुलाभिमान, बुद्धिमता जातीय

श्रेष्ठता और पदाधिकार की सामर्थ्यता है। दूसरा-अर्थ के अभाव में प्रथमवर्ग की दया पर जीने वाला, उनके अत्याचारों को चुपचाप सहनेवाला और कदम-कदम पर गाली, कटुवचन, अपशब्द सुनकर भी उनकी डयौढी पर अपने प्राण त्यागने के लिए विवश भूमिहीन अछूतों का है। चौधरियों की दृष्टि में अछूतों के जीवन की कोई एहमियत नहीं है। वे उनके साथ पशुवत् व्यवहार करते हैं। उन्हें प्रताड़ित करना,गाली देना और डाँट-फटकारना आदि बातें तो चौधरियों के लिए आम बात थी। रोटी-पानी का व्यवहार तो बहुत दूर की बात थी, अछूत और अस्पृश्य समझकर पशुओं से भी बदतर व्यवहार उनके साथ होता था।एक दिन गाँव की चमारिनें,चौधरियों के कुएँ से पानी भरने आती है लेकिन उन्हें वहाँ से भगा दिया जाता है।लेखक ने इन दोनों वर्ग के बीच उठते तीव्र मतभेद,उससे उत्पन्न संघर्ष और अंततः पराजित दबी उनकी आत्मा का सफल चित्रण किया है। डॉ० बंसीधर के शब्दो में - इसके शब्द-शब्द से दबी-पिसी मानवता की वेदना के स्वर सुनाई दे रहे हैं। "[101]

उपन्यास का नायक काली, चौधरियों के शोषण के खिलाफ आवाज़ उठाता है। जब चौधरी, चमारों को अपने खेतों खलिहानों तथा उनकी औरतों को डयोढ़ियों में आने से रोकते हैं। बाढ़ के समय मज़दूरी के बिना काम करने को कहते हैं तो सभी चमारों में रोष की भावना फैल जाती है। चमादड़ी के सारे चमार एक जुट होकर शोषण और बेगार के खिलाफ चौधरी समाज का बहिष्कार कर देते हैं। परन्तु अर्थ की समस्या इन शोषितों की कमर तोड़ देती है।

आधुनिक युग में दलितों,पिछडें वर्गो आदि में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता आ रही है इसका जीवन्त उदाहरण हमें'धरती धन न अपना'उपन्यास में देखने को मिलता है। काली अपनी जाति के लिए संघर्ष करता है। समाज में दलितों का अपना एक अलग स्वतंत्र अस्तित्व है ऐसा उन्हें पता चल चुका है। इस वर्ग चेतना के संघर्ष में काली टूटता अवश्य है लेकिन हिम्मत नहीं हारता है। वह संगठित शक्ति में विश्वास रखता है।

बेगार की इस प्रथा के कारण ही ज़मींदार निम्न जाति के लोगों का शोषण किया करते थे किन्तु अब उनमें शोषण के विरूद्ध चेतना जागृत होती हुई दिखाई दे रही है। निम्न जाति के लोगों में शोषण के विरूद्ध आवाज़ को उठाकर लेखक ने यह दिखाने की चेष्टा की है कि इस वर्ग में भी अब नवीन चेतना पनप रही है। जाति-पाँति, छुआ-छुत सामंती प्रथा तथा धर्म के नाम पर समाज में फैली हुई कुरीतियों को दूर करना ही लेखक का उद्देश्य रहा है क्योंकि जातीयता की यह भावना राष्ट्र को कमजोर और खोखला बनाने का कार्य करती है। जिससे देश का राष्ट्रीय गौरव दिनप्रतिदिन अन्धकार में चला जाता है। डॉ० ज्ञानचन्द गुप्त के अनुसार - काली का गाँव छोड़कर जाना या यकायक गाँव से गायब हो जाना पाठक के मन में आक्रोश भले ही निर्मित न करता हो, पाठक की चेतना के गहरे झकझोरता है। "[102]

XXi अग्निबीज - मार्कण्डेय

ग्राम्य-जीवन के विभिन्न पहलूओं को उजागर करने वाला मार्कण्डेय जी का 'अग्निबीज' आधुनिक प्रसिद्ध उपन्यासों में से एक है। आजादी के बाद,पिछड़े हुए गॉव के विकास के लिए सरकारी-बिनसरकारी संस्थानों के सद्भावपूर्ण प्रयत्न और उनको असफल बनाने वाले गाँव के परंपरावादी स्थापित हितो के दुष्कार्यो का सफल चित्रण इस उपन्यास में पाया जाता है।

उपन्यास के केन्द्र में एक गाँव है, जो सभी जाति के लोगों का आश्रयस्थान है। आज़ादी से पूर्व, जिस प्रकार ज़मींदारों की हकूमत गरीब, पिछड़ी जाति के लोगों पर चलती थी, आज भी चल रही है। गरीब किसान खेतों पर अपना खून-पसीना बहाता है, लेकिन फसलों से मालामाल होते हैं,जमींदारों के घर।गरीब किसानों की सहायता के लिए जब ज़मीदारी उन्मूलन का कानून लागू हुआ तो ज़मींदारों ने अपनी ज़मीने बेचनी शुरू की। गाँव में रहने वाला एक गरीब सूरज अहीर जब ज़मीदारो से अपने खेत को बचाने का प्रयत्न करता है तो उसे रस्सी से बाँधकर, उस पर इतना अत्याचार किया जाता है कि आखिर में उसकी मृत्यु हो जाती है।उसकी पत्नी बजमा,पति की ऐसी निर्मम हत्या से दुखी होकर आत्महत्या कर लेती है।गॉव का दूसरा गरीब किसान 'बाकर' भी इनके जुल्मों का शिकार होता है। बाकर के पास भी ज़मीन का एक छोटा सा टुकड़ा था, जिस पर खेती करके वह परिवार का पोषण करता था। बाकर को यह ज़मीन ठाकुर हरभनसिंह द्वारा बिना लगान के प्राप्त हुई थी, क्योंकि बाकर के पिता और ठाकुर परम मित्र थे। ज्वाला सिंह ने पुन: ज़मीन बाकर से छीन कर मुरली-महाराज को बेच दी।बाकर का तो जैसे सब कुछ ही लूट गया। वह अब सूत काँतकर जैसे-तैसे परिवार का गुजारा करता है।

गाँव में एक तरफ निर्मम और संगदिल ज़मींदार के अत्याचार हैं,तो दूसरी ओर भागो बहन और भाई जी जैसे उदार चरित्रों के परोपकारी सत्कार्य भी हैं। दोनों मिलकर अछूतो-उद्धार और कन्याओं के जीवन-विकास के लिए'कस्तुरबा हरिजन बालिका' पाठशाला नामक एक आश्रम-शाला का आरम्भ करते हैं। यहाँ अछूत कन्याओं के लिए अक्षर-ज्ञान की व्यवस्था की जाती है, साथ ही सूत काँतने जैसी प्रवृत्ति द्वारा उन्हें आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने की शिक्षा भी दी जाती है। ठाकुर ज्वालासिंह इस आश्रम से अपना स्वार्थ सिद्ध करने का प्रयत्न करता है।वह पाठशाला के पीछे की जमीन आश्रम को दान में देने की घोषणा करता है, लेकिन यह तो महज एक चुनावी खेल था।चुनाव नज़दीक आ रहे थे, तब अछूतों के सारे वोट उसे सरलता से प्राप्त हो, इसलिए यह दान दिया जाता है। पाठशाला के उद्घाटन-समारोह में ठाकुर की बेटी श्यामां स्वंय लोगों के सामने इनके दोहरे व्यक्तित्व का पर्दाफाश करती है। वह कहती है "कन्या के घर में जनमते ही कुल में खोट आती है। खुशी की जगह

रंज मनाया जाता है। मैंने खुद देखा है कि गाती ब्राह्मणियाँ सिर झुका कर उठ जाती है।"[103] श्यामा,गरीब अछूत कन्या हिरनी की मौत का राज़ भी खोलती हुई कहती है कि पूंजीपतियों के अत्याचारों की वजह से ही हिरनी ने कुएँ में कुदकर अपनी जान दी।

भाई जी और भागो बहन के इस आश्रम में.बिना भेदभाव के सागर,सुनीत, श्यामा और मुराद सक्रिय रूप से योगदान दे रहे हैं। सागर,हरिजन युवक है,वह अध्यापक के रूप में पाठशाला में अपनी सेवा दे रहा है।श्यामा ठाकुर की बेटी है और आश्रम के कार्य में मदद करती है। इस प्रकार गाँव का यह आश्रम देश की सांस्कृतिक एकता का प्रतीक सा प्रतीत होता है, जहाँ प्रेम और सद्‌भाव से मिल-जुलकर लोग एक साथ जीवन-जीते हैं। गाँव के पिछड़े और अछूतों के जीवन में आशा की नयी किरणें चमकने लगी है।

गाँव के प्रतिष्ठित और सम्पन्न लोगों को आश्रम की इन प्रवृत्तियों से अप्रसन्नता है। एक दिन गाँव का पंडित,लछमनियाँ नामक पिछड़े वर्ग की लड़की को बुलाने पाठशाला आता है, तो सागर और पंडित के बीच तीखी बहस भड़क उठती है। पंडित, लछमनियाँ द्वारा अपने पशुओं को चरवाने का काम करवाता था। सागर ने लछमनियाँ को भेजने से इन्कार किया तो आगबबूला होकर पंडित कहने लगा "क्या बोल रहा है रे तू मुसईवाले, जब चमारों के सब लड़के पढ़ने जाएँगे, तब ठाकुर बाभन का काम कौन करेगा ? तेरे तोड़ने से वर्नासरम टूट जाएगा ? पागल तो नहीं हो गया है ?"[104] इस प्रकार गाँव के उच्चवर्गीय लोग, निम्नवर्गीय लोगों की सेवा लेना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझ रहे थे। दूसरे ही दिन, श्यामा के विवाह की तैयारियों मे लोगों की व्यस्तता का लाभ उठाकर आश्रम में आग लगा दी जाती है। सागर आग बुझाने के प्रयत्न में बुरी तरह से घायल हो जाता है। इस गाँव के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के लिए सक्रिय इस आश्रम को नष्ट करके ज़मींदारों ने अपनी सत्ता और सामर्थ्य को पुनः सुरक्षित बना लिया, जिससे दबे-पिछड़े गरीब लोगों पर अपने अत्याचारों का दौर जारी रखा जाए।

इस प्रकार देश की पिछड़ी जनता आज भी सामाजिक-आर्थिक अत्याचारों का शिकार होकर दयनीय जीवन जीने के लिए विवश हैं। लेखक ने देश की सामाजिक विषमता तथा उससे उत्पन्न सामाजिक दूषणों और समस्याओं का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है।

'अग्निबीज' उपन्यास में निरूपित चेतना --

मार्कण्ड़ेय जी द्वारा रचित 'अग्निबीज'उपन्यास की कथावस्तुं गाँधी जी की विचारधारा से प्रभावित प्रतीत होती है।स्वतंत्रता आंदोलन के समय देश के राजनीतिक उद्देश्य को सफल बनाने के साथ-साथ गाँधी जी ने देश की सामाजिक और आर्थिक उन्नति

के लिए जो सफल प्रयोग प्रस्तुत किये थे, उनका प्रभाव स्वतंत्रता के पश्चात् धीरे-धीरे कम होता गया। इस उपन्यास के आधार पर यह प्रतीत होता है कि लेखक के मतानुसार देश के सर्वांगिक विकास के लिए आज भी गाँधी जी की विचारधारा के अनुसार समाज को आवश्यक कदम उठाने चाहिए। उपन्यास की कथावस्तु के संयोजन में गाँधी-विचारधारा के निम्नलिखित पक्षों का प्रभाव देखा जा सकता है नारी उद्धार, नारी शिक्षा, वर्ग भेद की विचारधारा का उन्मूलन करते हुए निम्नवर्ग के सामाजिक आर्थिक रूप से उद्धार का प्रयत्न, समाज को स्वावलम्बन बनाने के लिए लघु उद्योग का महत्व आदि।

नारी की आर्थिक और सामाजिक परतंत्रता ही सबसे बड़ी परतंत्रता है। इसी बात को ध्यान मे रखते हुए भाई और भागो बहिन गाँव में निम्न वर्ग की कन्याओं को शिक्षा प्रदान करते हैं,जिससे की वह घर की चार दिवारी से निकल पुरूष के समकक्ष खड़ी हो सकें, साथ ही उन्हें चरखा चलाना और सूत कातना सिखातें हैं जिससे की वह आर्थिक रूप से भी स्वतंत्र हो सकें। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए गाँव में 'कस्तूरबा हरिजन बालिका पाठशाला' का निर्माण किया जाता है।

लेखक यह भी बताना चाहता है कि उच्चवर्ग यह सहन नहीं कर पा रहा है कि निम्नवर्ग उसके समकक्ष खड़ा हो सके। इसलिए वह उनके मार्ग में बाधा उपस्थित करते हैं। गाँव में पाठशाला के खुल जाने पर निम्नवर्ग के बच्चे पढ़ने आते हैं जिससे उच्चवर्ग के काम रूक जाते हैं। इसी कारण उच्चवर्ग के लोग आश्रम को जला देते हैं। आग की यह घटना जाँति-पॉति के कारण उत्पन्न आक्रोश एवं प्रतिशोध का ही परिणाम है।

आज के प्रगतिशील युग में समाज के अधिक्तर लोगों में छुआ-छूत, जाँति-पाँति आदि की विचारधाराओं में परिवर्तन हो रहा है। निम्नवर्ग में अब आत्मविश्वास,साहस तथा अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता आदि की अभिव्यक्ति मिलती है। निम्नवर्ग संगठित हो रहा है। उच्चवर्ग का दबदबा अब यह निम्नवर्ग सहन करने को तैयार नहीं है।

लेखक ने गाँधी जी की विचारधारा को इसलिए चुना है क्योंकि यदि राष्ट्र को संगठित रूप से रखना है तो हमें ऊँच-नीच, जाँति-पॉति, धार्मिक भेदभाव आदि को भूलकर केवल मानवता के धर्म को महत्व देना होगा,तभी राष्ट्र उन्नति के पथ की ओर अग्रसर हो सकेगा। उपन्यास के श्यामा, सागर, सुनीत और मुराद अलग-अलग जाति एवं धर्म के होने के बावजुद भी एक होकर गाँव में फैली हुई बुराइयों एवं कुरीतियों के खिलाफ लड़ते हैं।

मार्कण्डेय जी का यह उपन्यास देश के सामाजिक - आर्थिक परिवेश का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करता है। आज भी गरीब और पिछड़ी जाति के लोग समाज के सम्पन्न और समर्थ लोगों के अत्याचारों का शिकार बनते हैं। सामाजिक प्रतिष्ठा और आर्थिक लाभ के लिए उन पर निर्दयतापूर्वक जुल्म और अत्याचार किये जाते हैं। इन अत्याचारों से

बचाने का कोई प्रयत्न भी करे तो उसके अस्तित्व को भी नष्ट कर दिया जाता है। लेकिन इन्हीं आग की होली से जन्म होता है अग्निबीज का, जो एक दिन ज्वाला बनकर अवश्य भड़क उठेगी। पुरानी सामाजिक, आर्थिक व्यवस्थाएँ तब तहस-नहस हो जाएंगी और एक नये भारत का निर्माण होगा।

xxii जल टूटता हुआ -- रामदरश मिश्र

'जल टूटता हुआ' रामदरश मिश्र जी का ऑचलिक उपन्यास है। मिश्र जी ने अपने इस उपन्यास में गोरखपुर जनपद के कछार अंचल के परिवर्तित जीवन का प्रभावशाली चित्र प्रस्तुत किया है। इसमें ग्रामीण जीवन की समस्याओ एवं समाधानों का अंकन पाया जाता है।

प्रस्तुत उपन्यास का प्रारम्भ भाटपार स्कूल के स्वाधीनता - दिवस समारोह से होता है। स्वाधीनता-दिवस समारोह की अध्यक्षता करते हैं,गाँव के ज़मींदार बाबू महीपसिंह। महीपसिंह का गाँव में भारी दबदबा है।सब उन्हीं के आदेशानुसार कार्य करते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सरकार के प्रयत्नों से गाँवों के उद्धार के लिए पंचायती राज कानून लागू किया गया। सरकार के इन प्रयत्नों के परिणामस्वरूप ग्रामीण लोगों में अपने अधिकारों के प्रति चेतना का संचार हुआ। निम्न जाति के लोग अब धीरे-धीरे ज़मींदार महीपसिंह के यहाँ सलामी देना और बिना मज़दूरी के काम करना बन्द करने लगे। ज़मींदार महीपसिंह जब अपने नौकर जगपतिया को गालियाँ देकर काम करने के लिए कहते हैं, तो वह कहता है कि बाबूजी गाली मत दीजिए। महीपसिंह,जगपतिया के इस नये रूख से क्रोधित होकर कहते हैं "क्यों रे साले, मेरी नौकरी - नौकरी नहीं है ? बक-बक करेगा तो मार जूतों के झाड़ तोड़ दूँगा।"[105] जगपतिया भी आगे बढ़कर उसी ढँग से उत्तर देते हुए कहता है कि "कितने महीने हो गये, मुझे एक पाई भी नहीं मिली। एक मेरा ही पेट तो नहीं है कि आपके यहॉ इसे जिला लूं। घर के लोग क्या खायेंगे ? खेत तो आपने हमारे बाप-दादों को उनकी नौकरी में दिया था, कोई एहसान तो नहीं किया है। "[106] जगपतिया यह कहकर ज़मीदार महीपसिंह की नौकरी छोड़कर कलकत्ता चला जाता है।

गाँव का प्रगतिशील युवक सतीश, जो महीपसिंह के यहाँ अपने पिता अमरेश जी के आदेशानुसार कार्य करता है, वह जगपतिया के विद्रोही विचारों को सुनकर प्रसन्न हो उठता है। उसे लगता है जगपतिया की यह आवाज़ उसकी अपनी आवाज़ है। उसे इस बात का दु:ख भी है कि जो काम वह नहीं कर सका, उसे जगपतिया ने कर दिखाया।

गाँवों में पंचायती राज का कानून लागू हो जाने से, गाँव का सामंती वर्ग अपनी सत्ता

और प्रभुत्व को बनाये रखने के लिए राजनीति के क्षेत्र में प्रवेश करता है। सतीश इनके मनसूबों को जान जाता है। वह स्वयं बाबू महीपसिंह के खिलाफ चुनाव में खड़ा होता है। बाबू महीपसिंह को चुनाव में जीतने की उम्मीद कम दिखाई देती है। अतः वह गाँव के प्रतिष्ठित लोगों को डरा-धमकाकर चुनाव लड़ने के लिए खड़ा करता है। वह मास्टर सुग्गन को तबादले की धमकी देकर चुनाव लड़ने के लिए मजबूर करता है। फेंकू बाबा और दीनदयाल को उकसाता है। वह सतीश के गुट को कमजोर करने के लिए सभी हथकंडों का प्रयोग करता है।सतीश इन विरोधी ताकतों का सामना करता हुआ नवचिन्तनशील युवक की तरह चुनाव लड़कर जीत जाता है। जगपतिया कलकत्ता से वापिस गॉव लौटकर लाल झण्डे द्वारा मजदूरों के अधिकारों के लिए सतीश के साथ मिलकर लड़ता है वह मज़दूरों से कहता है "क्रॉंति कर दो, क्रॉंति कर दो.... मजदूरी बढ़वायों, जो मजूरी कम दे या खराब जबान बोले, उसके यहाँ काम करने मत जाओ,खेत तुम्हारे हैं, तुम उनके मालिक हो।"[107] यहॉ कम्यूनिष्ट क्रॉति के प्रभाव को देखा जा सकता है।

गाँव का मास्टर सुग्गन दहेज जैसी सामाजिक कुरीतियों - बुराईयों से भी दुःखी है। शिक्षक की नौकरी में बेटी के दहेज के लिए बड़ी रक़म जुटा पाना उसके लिए सम्भव नहीं है। सुग्गन की बेटी गीता का विवाह भी इसी दहेज की कुप्रथा के कारण अब तक हो नहीं पाया है। इसी कारण पिता का हृदय अधिक दुःखी है। वंशी की पुत्री का विवाह भी दहेज के कारण नहीं हो पा रहा है। अतः वह निम्न जाति के हंसिया को अपने प्रेम जाल में फंसा कर भगा ले जाना चाहती है। पकड़े जाने पर अपने त्रिया चरित्र का प्रदर्शन करने लगती है। परिणामस्वरूप ऊँची जाति के लोग बेचारे हंसिया को बुरी तरह से पीटते हैं। वास्तविकता को जानने की किसी को चिन्ता नहीं थी।लबंगी जब अपने भाई हंसिया की पिटाई होते देखती है तो उसका हृदय विद्रोह कर उठता है। वह न्याय की मॉग करती हुई कहती है "जब चमरौटी की तमाम लड़कियों पर ये बाबा लोग हाथ साफ़ करते हैं, तो कोई परलय नहीं आता और कोई चमार,बाभन की लड़की को छू दे तो परलय आ जाता है"[108] लंबगी के यह बोल उसके जातिगत सम्मान और अधिकार बोध के सूचक हैं।साथ में ग्रामीण जीवन के उस यथार्थ का एक पारदर्शी चित्र भी प्रस्तुत होता है। ग्रामीण जीवन मे आ रहे बदलाव का सूचक है। लंवगी के इन शब्दों में नये ज़माने की आवाज़ है जो अब बहुत दिनों तक अनसुनी या दबी नहीं रह सकेगी।

तिवारीपुर गाँव में जब चकबंदी होने लगती है तो गाँव के सभी छोटे-बड़े लोग अच्छी और उपजाऊ ज़मीन पाने के उद्देश्य से चकबन्दी ऑफिसर को घूस देने लगते हैं। सतीश यह देख ऑफिसर का तबाद्ला करा देता है। उपन्यास के अन्त मे हम देखते है कि निम्न जाति की बदमी और उच्च जाति के कुंज के प्रेम को लेकर लोग बदमी को बदनाम

करते है। कुंज समाज के वर्ग भेद और रीति-रिवाज आदि की परवाह न करते हुए गॉव के समक्ष उसे अपनी धर्म पत्नी के रूप में स्वीकार करता है।

प्रस्तुत उपन्यास में सतीश गाँव में आ रहे बदलाव की एक दमकती किरण को देख रहा है। जिसका मूल है जगपतिया, बदमी, कुंज और लंवगी का विद्रोह। सतीश का पंचायती चुनाव में जीतना और उसके सामने महीपसिंह जैसी गलत ताकतों का हारना, इस बात का साक्षी है कि गाँव के लोगों में नवीन चेतना का संचार हो रहा है, नई जागृति आ रही है। शनै: शनै लोगों में अपने अधिकारों के प्रति चेतना पनप रही है।

'जल टूटता हुआ' उपन्यास में निरूपित चेतना --

देश की स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सरकार ने गाँवो के उद्धार के लिए अनेक योजनाएँ लागू की। देश के समकालीन परिवेश का प्रभाव भी आज सुदूर गाँवों तक पहुँचा हुआ है। रामदरश मिश्रजी का प्रस्तुत उपन्यास भी गाँव के बदलते हुए माहौल का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करता है।गोरखपुर जिले के तिवारीपुर गाँव का वातावरण अपनी प्राचीन मान्यताओं को त्याग कर एक नई चेतना से अनुप्राणित होता हुआ प्रतीत होता है।"[109]

प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु में बाबू महीपसिंह प्राचीन जमींदारी व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनकी गिनती बड़े ज़मींदारों में होती थी। अत: गॉव के सभी कार्यक्रमों में और अन्य बहुविध प्रवृत्तियों में भी उन्हें अध्यक्षता प्रदान करके उनके जमींदारी - प्रभाव को आज भी गाँव वाले मान्य रखते हैं। स्वतंत्रता से पूर्व इन जमींदारो का गॉवों में भारी दबदबा था। वे गरीबों का आर्थिक-सामाजिक शोषण करते थे। उनके मनमाने अन्याय और अत्याचारपूर्ण व्यवहार के सामने कोई मुँह तक नहीं खोल सकता था। लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात शनै: शनै: इन स्थितियों में बदलाव के संकेत गाँवो में दिखाई देने लगे। जमींदार महीपसिंह का पुराना नौकर जगपतिया भी उनके अन्याय का विरोध करते हुए नौकरी छोड़ देता है। गाँव वालों के राजनैतिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए सरकार द्वारा पंचायती राज की योजना लागू होती है। टूटे हुए ज़मींदार अपने प्रभाव और प्रतिष्ठा को गाँव में बनाये रखने और अपने स्वार्थ को पूरा करने के लिए पँचायती चुनाव जीतने की भरपूर कोशिश करते हैं। गाँव का प्रगतिशील युवक सतीश जो ज़मींदार के यहाँ नौकरी करता है वह भी पंचायती राज की बात सुनकर उनके यहाँ नौकरी छोड़ देता है और उन्हीं के खिलाफ पंचायती चुनाव में खड़ा होता है। ग्रामीण युवक सतीश नयी राष्ट्रीय चेतना से अनुप्राणित होकर समाज के दबे,पिछड़े वर्ग के लोगों को अपने आत्मसम्मान और अधिकारों के लिए महीपसिंह जैसे अत्याचारियों के प्रभाव से मुक्त कराने के लिए संघर्ष की राह दिखाता है। परिणामस्वरूप पंचायती राज् के चुनाव में सतीश और उसके साथियों की जीत होती है।

लेखक ने निम्न वर्ग के हंसिया और पार्वती के प्रेमप्रकरण द्वारा जहाँ गाँव की सामाजिक रुढ़िवादी मान्यताओं का चित्रण किया है,वहाँ ग्रामीण चमार कन्या लंवगी के संवादों द्वारा निम्न, दलित और अछूत जाति के लोगों में आ रही नयी सामाजिक चेतना का भी बड़ा प्रभावशाली चित्र प्रस्तुत किया है। "वोट लेने वाले नेताओं से जाकर कहो कि हमारा खून - खून नहीं है। हमारी इज्ज़त - इज्ज़त नहीं है तो हमारा वोट ही वोट क्यों है ?"[110] लंवगी के उक्त कथन में नये जमाने की क्रॉंतिकारी आवाज़ को सुना जा सकता है। उपन्यास के अन्त में उच्चवर्ण का कुंज, निम्न जाति की बदमी को अपनी धर्मपत्नी के रूप में स्वीकार करता है। इस प्रकार मिश्र जी ने उपन्यास की कथावस्तु में ग्रामीण-जीवन के परिवर्तनशील यथार्थ का प्रभावशाली अंकन प्रस्तुत किया है।"जमींदारी उन्मूलन, भूदान आन्दोलन, राजनीतिक चेतना की परिव्याप्ति, धार्मिक विश्वासों आदि को अभिव्यक्ति देकर एक विशेष अंचल के द्वारा उभरती हुई आधुनिक भारतीय गाँव की सजीव गाथा बन गई है।"[111]

xxiii अलग - अलग वैतरणी -- शिवप्रसाद सिंह --

'अलग-अलग वैतरणी' शिवप्रसाद सिंह जी का एक बहुचर्चित उपन्यास है। लेखक ने परिवर्तित ग्रामीण परिवेश को चित्रित करके यह बताने का यत्न किया है कि स्वतंत्रता के पश्चात भी गरीब किसानों और समाज के पिछड़े वर्ग के लोगों की दशा आज भी उतनी बुरी है, जितनी स्वतंत्रता से पूर्व थी। जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े हुए लोग भी इस गाँव को नया रूप देने का यत्न करते हैं लेकिन वे सब भी अंततः असफल रहते हैं।

स्वतंत्रता के पश्चात् ग्राम्य-सुधार, कृषि और भूमि हीनों के जीवन-विकास के लिए एक महत्वपूर्ण नियम लागू हुआ,जो ज़मीन उन्मूलन के नाम से जाना गया। इसका मुख्य उद्देश्य था, ज़मीनों पर ज़मींदारों, जागीरदारों तथा सामन्तों के एकाधिकार को नष्ट करके भूमिहिन किसानों या मज़दूरों को कृषि विकास के लिए प्रचुर अवसर उपलब्ध करवाना। लेकिन सारे प्रयास व्यर्थ सिद्ध हुए। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जमींदारी उन्मूलन, पंचायती चुनाव और उसके पैंतरे, शोषण का नया स्वरूप,आर्थिक विषमता,जीवन में व्याप्त भ्रष्टता, आर्थिक संघर्ष आदि समस्याएँ ही इस वैतरणी का निर्माण करती है जिसमें सारा करैता बह रहा है।

शिवप्रसाद सिंह रचित 'अलग-अलग वैतरणी' हिन्दी का एक ऐसा उपन्यास है जिसमें ग्राम्य-जीवन को नरक बनाने वाली ज़मींदारी प्रथा के उन्मूलन के पश्चात् की स्थिति का विशद चित्रण किया है। किसानों, खेत मज़दूरों तथा गाँव के भूमिहिनों की अवदशा का प्रमुख कारण था, स्वार्थी और अत्याचारी ज़मींदारो के द्वारा किया गया शोषण। ज़मींदारों के एकाधिकार धीरे-धीरे समाप्त हुए। लगान के रूप में छोटे किसानों या मजदुरों के पास जो

संपत्ति रहती थी वह ज़मीदारों को भेंट स्वरूप चढ़ा दी जाती थी। स्वतंत्रता के पश्चात् जब लोगों ने नई चेतना से प्ररीत होकर ज़मींदारों की सेवा करनी बन्द कर दी तब ज़मींदार जैपालसिंह अपने अधिकारों के साथ गाँव को छोड़कर अन्यत्र निवास करता है। लेकिन वे अधिक दिनों तक श्रीहीन होकर जी नहीं पाते। करैता गॉव में पंचायती चुनाव की बात सुनकर वह चार साल बाद मीरपुर से वापिस गाँव लौट आते हैं। गॉव आकर गॉव के सुरजू सिंह के खिलाफ चुनाव लड़ने की सोचते हैं। जैपाल सिंह को गाँव में वापिस आया हुआ देखकर लोगों को विश्वास ही नहीं होता कि माँसाहारी बाघ शाकाहारी हो गया है।गाँव के अधित्तर लोग अब दस गुना लगान जमा कर के भूमिघर बन गये थे,इसलिए अब कोई भी उनसे डरता नहीं है।

ग्राम्य सभा के चुनाव में जैपाल सिंह अपनी स्थिति को कमज़ोर पाकर सुरजू सिंह को हराने कि लिए अपने सारे वोट निम्न वर्ग के सुखदेव को दिलवा देते हैं। सुखदेव ग्राम सभा का चुनाव जीत जाता है और जैपाल सिंह का अनुयायी बन जाता है। निम्नवर्ग का प्रतिनिधि करनेवाला सुखदेव चुनाव जीतकर उच्चवर्ग का गुलाम और निम्नवर्ग का शत्रु बन जाता है।

ज़मींदार जैपालसिंह की मृत्यु के बाद उनका पुत्र विपिन आगे पढ़ाई करने के लिए शहर जला जाता है। पढ़ाई खत्म कर वह वापिस अपने गॉव लौट आता है। गाँव का देवनाथ जो डॉक्टरी पढ़ने शहर गया था। वह भी वापिस गाँव लौट आता है। इन दोनों नवयुवकों ने शहर में रहते हुए गाँव की उन्नति के लिए कई मनसूबे बाँधे थे। विपिन के सहयोग से देवनाथ गाँव में एक छोटा सा अस्पताल खोल लेता है।

शशिकान्त एक आदर्श अध्यापक हैं, जब उसका तबादला करैता गॉव के स्कूल में होता है तो सब उसकी हँसी उड़ाते है किन्तु वह एक सच्चे आदर्शवादी अध्यापक की तरह प्रसन्न है कि वह इस गाँव में अवश्य सुधार लाएगा। वह स्कूल के बच्चों के लिए कई योजनाएँ बनाता है। वह हेडमास्टर मुंशी जवाहीरलाल और पुरूसोत्तम सिंह को सम्बोधित करते हुए कहता है कि "यहाँ का स्कूली जीवन बड़ा नीरस और डल है। इससे बच्चों का पूरा विकास कभी नहीं हो सकता। .... लड़कों में आवश्यक उत्साह पैदा करने के लिए पढ़ाई-लिखाई के अलावा भी कुछ कार्यक्रम होने चाहिए ?"[112] लेकिन दोनों मास्टर काम का बहाना बनाकर खिसक जाते हैं। शशिकान्त अकेला ही बच्चों के उज्जवल भविष्य के लिए विरोधी ताकतों से लड़ता है। सुरजू सिंह और हेडमास्टर के कहने पर भी वह बुझारथसिंह के खिलाफ झूठी गवाही नहीं देता जिसके कारण वह उनका शत्रु बन जाता है।अत:एक दिन वह सभी मास्टरों की तनखाह लेकर आ रहा था तब किसी ने सारी रकम उससे छीन ली। वह निराश होकर गाँव पहुँचता है परन्तु कोई भी इतनी बड़ी रक़म का

इन्तजाम करने में मदद नहीं करता है। परिणामस्वरूप वह रात के अन्धेरे में गाँव छोड़कर हमेशा के लिए कहीं चला जाता है।

झिनकू और गाँव के कुछ लोग भूमि सम्पन्न जगजीत सिंह से खेत लेकर मज़दूरी करते थे। पैदा हुई फसल का आधा हिस्सा मालिक को देते थे लेकिन धीरे - धीरे अब इनकी मानसिकता में परिवर्तन होता हुआ दिखाई देता है। झिनकू सोचता है, क्यों न दिहाड़ी पर काम करें, फसल हो, न हो हमें क्या ? वह जब जगजीत सिंह को कहता है कि अपना खेत ले लो मुझे 'रोज़ीना बन्नी' पर रखलो तो वह झिनकू को खूब मारता है। झिनकू मार खाकर भी कहता है कि "और मारो बाबू और मारो। मार के जान ले लो। लेकिन हम एक बार नहीं सौ बार कह रहे हैं कि हम बिना रोज़ीना बन्नी में काम नहीं करेंगे। "[113]

देवनाथ गाँव में दवाखाना खोल गाँव के लोगों की सेवा करता है। पिंता के विरोध करने के बावजूद भी वह कम या बिना फीस के दवाई देता है। गाँव के लोग उसे ठगते भी हैं परन्तु वह किसी को कुछ नहीं बोलता। उसके पिता की इच्छा है कि वह शहर जाकर अधिक धन अर्जित करे, लेकिन वह उनकी एक नहीं सुनता। जब कल्पू की पत्नी के साथ दूषित सम्बंध का उस पर लांछन लगता है तो वह गाँव को छोड़कर कस्बे में चला जाता है। मास्टर शशिकान्त और देवनाथ पर हुए अत्याचारों को देख विपिन का ह्रदय पिघल उठता है। परिणामस्वरूप वह गाज़ीपुर कॉलेज में व्याख्याता की नौकरी के लिए गाँव छोड़कर चल देता है। वह मिसिर चाचा से कहता है कि "मैं तो बड़ी उम्मीदें लेकर आया था। जन्मभूमि के प्रति अपने मन में कम मोह नहीं है। पर ऐसा गन्दा और वाहियात हो गया है यह गाँव, यह मैं नहीं जानता था। "[114] मिसिर जी गाँव के पढ़े लिखे लोगों का लौट जाते हुए देखकर दुखी है। वह विपिन से कहता है "लोग पहले भी जाते थे, अक्सर वे जिन्हें यहाँ काम नहीं मिलता था, या फिर वे जो ज़मींदारों के जोर-जुल्म से घबराकर भाग जाते थे। पर अब तो एक नये तरह का अनत गौन हो रहा है। यहाँ रहते वे हैं जो यहाँ रहना नहीं चाहते, पर कहीं जा नहीं पाते। यहाँ से जाते अब वे हैं, जो यहाँ रहना चाहते है, पर रह नहीं पाते। "[115]

इस उपन्यास में लेखक ने करैता गाँव के माध्यम से समस्त भारतीय गाँवों का प्रतिनिधित्व किया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् ज़मींदारी उन्मूलन के बाद प्रभावित गॉवों का विस्तृत अंकन इस उपन्यास में प्राप्त होता है।

'अलग - अलग वैतरणी' उपन्यास में निरूपित चेतना --

करैता गॉव के मंच पर ग्राम जीवन के अनेक पहलू सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि उभर कर आए हैं। प्रत्येक पहलू एक अलग वैतरणी है। इस उपन्यास का महत्व इसमें वर्णित वैतरणी के कारण ही है।"[116] अलग-अलग वैतरणी में चित्रित

करैता गॉव भारतीय गॉवों का प्रतिनिधित्व करता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् ज़मींदारी प्रथा के उन्मूलन के बाद प्रभावित गॉवों का विस्तृत अंकन इस उपन्यास में प्राप्त हुआ है। "स्वतंत्रता आई ! ज़मींदारी टूटी ! करैता के किसानों को लगा कि दिन फिरेंगे। मगर हुआ क्या ? अलग-अलग वैतरणी ! अलग-अलग नर्क ! जिसे निर्मित किया है भूतपूर्व ज़मींदार ने,धर्म तथा समाज के पुराने ठेकेदारों ने, भ्रष्ट सरकारी ओहदेदारों ने और इस वैतरणी में जूझ और छटपटा रही है, गाँव की प्रगतिशील नई पीढ़ी ! निश्चय ही यह हिन्दी उपन्यास साहित्य की एक उपलब्धि है। "[117] सामाजिक-आर्थिक शोषण गाँव में सर्वत्र फैला हुआ है। नये सुधारवादी मूल्य यहाँ प्रभाव नहीं डाल पा रहे हैं।इस रूढ़िवादी परम्परा के कारण ग्रामीण समाज पतनोन्मुख होता जा रहा है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सरकार ने ग्राम्य सुधार और पिछड़ी जाति के उद्धार के लिए उन्हें शासननीतियों में सक्रिय बनाने के हेतु पंचायती राज की स्थापना की,जिससे गाँव के गरीब लोगों को शोषण से मुक्ति मिल सके परन्तु इसका परिणाम यह हुआ कि जो ज़मींदार, ज़मींदारी प्रथा के खत्म हो जाने से शहर की ओर पलायन हो गये थे वह फिर से शासन की डोर को अपने हाथों में आया देख वापिस गॉव लौट आते हैं। ज़मींदार जैपाल सिंह गाँव में आकर सुरजू सिंह के खिलाफ चुनाव लड़ते हैं परन्तु अपने को हारता हुआ देख निम्न वर्ग के सुखदेव को जितवा देते हैं। सुखदेव शोषित वर्ग का प्रतिनिधित्व केवल नाम मात्र के लिए करता है। वह प्रधान बनता है लेकिन असली कर्ता-धर्ता बनते हैं ठाकुर जैपाल सिंह। दोनों मिलकर गाँव में उल्टी-सीधी योजनाएँ बनाकर पैसा बटोरते हैं।

लेखक ने यहाँ शिक्षा के क्षेत्र में फैल रहे भ्रष्टाचार एवं लापरवाही की तरफ भी मानव जाति का ध्यान आकर्षित करना चाहा है। मास्टर शशिकान्त जब करैता स्कूल में आता है तो वह बहुत खुश होता है परन्तु यहाँ पहुँच कर देखता है कि स्कूल के हेडमास्टर और पुरूसोतम सिंह को बच्चों का जरा भी ध्यान नहीं देता है। शशिकान्त अकेले ही स्कूल ही बच्चों के लिए शिक्षा के साथ खेलकुद का प्रबन्ध करता है परन्तु कोई उसका साथ नहीं देता है।स्कूल के हेड़मास्टर अधिकत्तर गाँव की राजनीति में ही व्यस्त रहते हैं। शशिकान्त को जब हेडमास्टर झुठी गवाही देने को कहते है तो वह साफ़ इन्कार कर देता हैं। इसका परिणाम यह होता है कि जब वह तन्खाह लेकर आ रहा था तो रास्ते में उससें सारे रूपये लुट लिए जाते हैं।मास्टर शशिकान्त को इस प्रकार गाँव छोड़ने के लिए मज़बुर कर दिया जाता है।

लेखक ने बताया है कि उपन्यास के प्राय: सभी शिक्षित, योग्य और कुशल पात्र एक-एक करके गाँव छोड़कर चले जाते हैं। विपिन, शशिकान्त और देवनाथ जैसे शिक्षित नवयुवक गाँव में आकर कुछ करना चाहते हैं, उनकी आँखो में आदर्शवादी सपने

हैं परन्तु वे गाँव की समस्याओं से लड़ते हुए वहाँ टिकते नहीं है बल्कि गाँव छोड़कर कस्बे या शहर चले जाते है। "अलग-अलग वैतरणी' में भी सब पात्रों को निराशा की वैतरणी में डूबते-उतराते छोड़ दिया गया है।विपिन, देवनाथ और मास्टर शशिकान्त जैसे सुधारवादी नवयुवान अपने लक्ष्य मे असफल होकर गाँव छोड़ने पर मजबूर हैं। ज़मींदारी समाप्त हुई तो शोषक वर्ग अनेक नए-नए रूप धारण कर लोगों को लूटने लगा है। इस उपन्यास की अन्तिम परिणति अनिश्चयात्मक भले ही हो,पर निराशापूर्ण नहीं कही जा सकती।"[118] लेखक यहॉ यह बताना चाहता है कि आज हमारे देश के अधिकत्तर योग्य और शिक्षित मनुष्य यहाँ पर शिक्षा ग्रहण कर विदेश चले जा रहे हैं।वे देश की समस्याओं से लड़ना नहीं चाहते।देश का हर शिक्षित मनुष्य यदि अपनी उन्नति के लिए सोचेगा तो राष्ट्र की उन्नति का क्या होगा? लेखक ने इस राष्ट्रीय संकट को दिखाकर जनमानस को देश के लिए जागृत करने का प्रयत्न किया है। गाँव के शिक्षित नवयुवक गाँव को छोड़कर शहरों मे आने से गाँव टूट रहे हैं, ग्रामीण जीवन-मूल्य टूट रहे हैं।

xxiv अपने लोग -- रामदरश मिश्र

'अपने लोग' रामदरश मिश्र जी का सामाजिक उपन्यास है। इसमें लेखक ने समाज के भीतर विद्यमान समस्याओं का चित्रण किया है।

उपन्यास का नायक प्रमोद गोरखपुर के निकट के गाँव का रहने वाला है दिल्ली के एक कॉलेज में लैक्चरर है। पिता जी के आग्रह को टाल नहीं पाता और इसलिए गोरखपुर के कॉलेज मे नौकरी मिलते ही, बीस वर्षो के बाद पुनः गोरखपुर लौट आता है। शहरी जीवन को छोड़कर प्रमोद का दिल्ली से गोरखपुर जैसे ग्रामीण स्थान में लौट आना उसकी पत्नी और बच्चों को अच्छा नहीं लगता है।

प्रमोद यहाँ आकर देखता है कि उसके चचेरे भाई बार-बार किसी न किसी बहाने रूपये मॉगते हैं। इतना ही नहीं बीवी, बच्चों के इलाज के बहाने महिने भर प्रमोद के यहाँ टिके रहते हैं जिससे उसकी आर्थिक स्थिति कमज़ोर हो जाती है। वह सोचने को विवश हो जाता है कि मैं तो फसल में से कुछ नहीं लेता और न ही ये लोग आती बार कुछ लेकर आते हैं। इसी कारण अन्त में तंग आकर वह उनकी मदद करना बन्द कर देता है।

प्रमोद गोरखपुर कॉलेज में देखता हैं कि विद्यार्थियों के दो दल है एक क्षत्रिय का और दूसरा ब्राह्मणों का । अधिकत्तर अध्यापक भी क्षत्रिय और ब्राह्मण ही हैं इसीलिए वे अपनी-अपनी जाति के विद्यार्थियों की भलाई में लगे रहते हैं। जीवन सिंह के निष्कासन को लेकर भी अध्यापकों में दो राय है। प्रिंसिपल जब अध्यापको को इस समस्या के समाधान के लिए बुलाते हैं तो वे सब आपस में लड़ने लगते हैं। प्रिंसिपल इन्हें चुप

कराते हुए कहते है कि" आप लोग जब भी कॉलेज की समस्या पर विचार करने आते हैं तब अपने-अपने दलों की ओर से लड़ाई छेड़ देते है या फिर जातिवाद पर आ जाते हैं, यह बड़ा दुर्भाग्यपूर्ण है।"[119] जीवन सिंह को बड़े नाटकीय ढंग से माफ कर दिया जाता है।

डॉ० सूर्यकुमार गोरखपुर की अधिकत्तर संस्थाओं के अध्यक्ष है उन्होने फुलवा की सारी ज़मीन को हड़प कर ही शानदार अस्पताल बनाया और धन इकट्ठा किया है। राजनीतिज्ञों के साथ भी उनकी सॉठ-गाँठ है। रामविलास योग्य, मेहनती मास्टर होने के बावजूद भी स्थायी नौकरी नहीं प्राप्त कर पाता है क्योंकि वह प्रिंसिपल को इधर-उधर की बातें नहीं बताता है।उसे प्रतिमाह १३५ रूपये मिलते हैं। आर्थिक रूप से तंग होने के कारण ही वह अपने पुत्र का इलाज नहीं करवा पाता है।

गाँव के चुनावी माहौल की गरमाहट में कांग्रेस नेता मंगल सिंह जैसे भ्रष्ट व्यक्तित्व का जीतना और जनसंघ के नेता वंशीधर ओझा का हारना प्रमोद को अच्छा नहीं लगता है। प्रमोद किसी भी पार्टी से जुड़ नहीं पाता, किन्तु अन्त में अपने पुत्र पवन को साम्यवादी पार्टी में सम्मिलित हुआ देखकर काफी सन्तुष्ट होता है। पवन,कामरेड जनार्दन और बी लाल के साथ साम्यवाद के नारे लगाता हुआ गाँव में कार्यरत रहता है। ये तीनों गरीबों के अधिकारों के लिए उपन्यास के अन्त में लड़ते हुए देखे जाते है।प्रमोद के प्रगतिशील विचारों को उसका पुत्र पवन ही साकार रूप मे गतिशील करता है।

इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने देश की सामाजिक जीवन-व्यवस्था में पनपी बुराइयों का विशद चित्रण किया है। प्रमोद के पारिवारिक जीवन की कथावस्तु द्वारा संयुक्त परिवार की बुराइयों का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है।

दूसरे, भारतीय समाज के विभिन्न अंगो में प्रविष्ट राजनीति के दुष्प्रभाव को भी बड़े प्रभावशाली ढंग से निरूपित किया गया है। शिक्षा का क्षेत्र, जो मानव-समाज को सुसंस्कृत बनाने का गुरुतम भार वहन करता है, वह भी राजनीति से बुरी तरह प्रभावित है। आज के विद्यार्थी का दिशाहीन होकर भटकना राष्ट्र का एक गम्भीर विषय है।

तीसरे, देश के विभिन्न क्षेत्रों में प्रतिष्ठित लोगों के भ्रष्ट, निर्मम और स्वार्थी व्यक्तित्व का व्यापक दुष्प्रभाव दीमक की तरह देश के जनजीवन को खोखला बनाता जा रहा है। डॉ. सूर्यकुमार के चरित्र द्वारा लेखक ने आज के लोकनेता - राजनेता के दोहरे व्यक्तित्व का पर्दाफाश किया है।

'अपने लोग' उपन्यास में निरूपित चेतना --

रामदरश मिश्र जी का 'अपने लोग' उपन्यास समकालीन पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन के नैतिक विघटन का एक प्रामाणिक दस्तावेज है। उपन्यास का नायक

प्रमोद एक संस्कारी, विवेकशील मनुष्यता का पक्षघर है। उसका प्रगतिशील चिन्तन का आदर्श अपने आसपास की भ्रष्ट और अवसरवादी व्यवस्था में निरन्तर संघर्षरत रहता है। अपने लोग बनकर आने वाले प्रमोद के परिजन इलाज के बहाने,आराम के बहाने,मुकदमा लड़ने या अपने छोटे-मोटे स्वार्थ सिद्धि के लिए प्रमोद से पैसा ऐठतें थे। प्रमोद और उसका परिवार धीरे-धीरे आर्थिक और मानसिक बोझ तले दबता जा रहा है,लेकिन किसी को कोई परवा नहीं है।अपनेपन के सारे सम्बंध खोखले और दिखावटी प्रतीत होते हैं। चालाक और अवसरवादी लोगों के ऐसे बेगानेपन से प्रमोद के मन में तीखा अहसार उभरता है वह कहता है "तुम लोगों ने मेरी शराफत को कमजोरी समझा और चालाकी से मेरा और मेरी पत्नी का खून चूसते रहै। "[120]

उपन्यास का केन्द्रवर्ती स्थान गोरखपुर नगर बनने की प्रक्रिया में राजनीतिक सामाजिक, शैक्षणिक, साहित्यिक, आर्थिक और पारिवारिक वितृष्णाओं, तनावो, मूल्यहीनता से उत्पन्न पीड़ाओ से गुजरता है। यहाँ अपने लोग ही अपनों का जोंक के समान रक्त चूस रहे हैं।"[121] चारों ओर फैली मूल्यहीन अराजकता के इस माहौल मे वे लोग ही फल-फूल रहे हैं जो दूसरा का खून चूस रहे हैं। स्थानीय कांग्रेस नेता शिवनाथ व्यभिचारी और कुटिल होकर भी चुनाव जीतता है। समाज में वह सम्मान प्राप्त करता है। डॉ.सूर्यकुमार गोरखपुर का एक प्रतिष्ठित डॉक्टर है। गोरखपुर की अनेक संस्थाओं का अध्यक्ष बन अपना राजनीतिक प्रभाव बनाये हुए है। तथापि अपने काँइयापन से फूलवा के पति को शराब पिलाकर उसकी सारी सम्पत्ति को हड़प लेता है। गरीब के पौत्र की बीमारी में भी वह मदद नहीं करता है। रामविलास के पुत्र की मृत्यु के बावजूद भी वह अपनी फीस लेने से नहीं चूकता। पत्नी के अतिरिक्त अन्य अनेक लड़कियों को फसाता है।ऐसी अनेकानेक घटनाओं के द्वारा लेखक ने डॉ० सूर्यकुमार के भ्रष्ट, मूल्यहीन और मानवता विहीन चरित्र को उद्घाटित किया है। इसके बावजूद भी वह अर्थ के बल पर सामाजिक,राजनीतिक सम्मानीय व्यक्ति के रूप में समाज में अपना दबदबा बनाये हुए है।

प्रमोद का शिक्षण संस्थान भी मूल्यहीनता, जातिवाद और भ्रष्ट राजनीतिक प्रभाव से अछूता नहीं है। शिक्षा संस्थानों में कोई जीवनमूल्य नहीं, नीति या नैतिकता जैसी कोई चीज़ नहीं है। जातिवाद वहाँ इतना पुष्ट है कि गुण्डे और आवारा लड़को को माँफी मिलती है और जो सचमुच गरीब और तेजस्वी विद्यार्थी है, वे आर्थिक सहायता पाने से वंचित रह जाते हैं। जातिवाद और अर्थ की सम्पन्नता से गुण्डे विद्यार्थी का बड़ा से बड़ा गुनाह माँफ हो जाता है और रामविलास जैसे प्रामाणिक शिक्षिक को बिना कसूर अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ता है। इस प्रकार लेखक ने गोरखपुर के माध्यम से देश की सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक, साहित्यिक सभी में व्याप्त भ्रष्टाचार को उजागर कियाहै। घर और घर के बाहर

प्रमोद का सारा संघर्ष जीवनमूल्यों की स्थापना का है। [122] यह दशा प्रमोद को ही नहीं वरन् पाठको के लिए भी करूणार्द्र थी। सामाजिक असंतुलन की बुनियाद है अर्थ की महत्ता और नैतिक विघटन। लेखक के मतानुसार व्यक्ति और समाज की इन स्थितियों से बाहर निकालने का एक मात्र रास्ता समाजवाद है।"[123] प्रमोद एक रचनाकार भी है और अपनी रचनाओं में वह उन्हीं मूल्यों की स्थापना के लिए संघर्षशील है जो शोषित मनुष्यता की पक्षधरता है। उसके प्रगतिशील चिन्तन का आदर्श ऐसे सामाजिक संघर्ष की भूमिका का निर्माण करना है जो मानव-मुक्ति का मार्ग प्रशस्त कर सके। "[124] उपन्यास के अन्त मे अपने पुत्र पवन को साम्यवादी पक्ष के साथ जुड़ते देखकर प्रमोद कहता है"कभी-कभी तड़प होती है कि काश मैं इस मिट्टी की गरीबी के विरूद्ध सक्रिय संघर्ष कर पाता। मैं सक्रिय संघर्ष नहीं कर सकता यह मेरी सीमा है, इसलिए वह चाह लिए मैं बराबर तड़पता रहा हूँ।वह चाह तुम्हारे माध्यम से अभिव्यक्ति पा ले, तो मुझे परम तृप्ति होगी।"[125]

XXV भ्रमभंग -- देवेश ठाकुर

'अपने लोग' उपन्यास की भाँति समकालीन जीवन के यथार्थ को बड़ी निकटता से अनुभूत करवाने वाली एक ओर रचना है 'भ्रमभंग'। देवेश ठाकुर का यह उपन्यास अद्यवधि अधिक प्रसिद्धि प्राप्त नहीं कर पाया है। परिचायात्मक विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि "इस कृति में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश के नैराश्य और हताकांक्षा की धुन्ध से पूर्ण वातावरण में सामान्य जन की मनोवृत्ति और मानसिकता का परिचय मिलता है।"[126] लेखक ने नवयुवा चन्दन की कथा द्वारा समकालीन मानवजीवन के आंतर-बाह्य संघर्षो और उससे उत्पन्न निराशा, हताशा और करूणन्तिका का प्रभावशाली चित्रण किया है। चन्दन महत्वाकांक्षी और अध्यवसायी है। वह अपने व्यक्तिगत जीवन, अपने परिवार और सुन्दर समाज की कल्पना में नये-नये सपने बुना करता है। लेकिन अपने आस-पास के परिवेश से टकराते-टकराते वे सारे सपने 'भ्रमभंग' सिद्ध होते है।

देश की सिद्धान्तविहीन राजनीति, असंतोषजनक आर्थिक स्थिति, महँगाई, बेरोजगारी तथा पारिवारिक सम्बंधों में प्रेम का अभाव, मूल्यहीनता आदि के कारण चन्दन को अनुभव होता है कि सर्वत्र एकमात्र रिश्ता अर्थ का ही है। वही ठोस रिश्ता है, और बाकी रिश्तो के सपने तो भ्रम थे।"[127] इस प्रकार यह उपन्यास आज की सभ्यता, सम्बंध और मूल्यों के भीतर अन्तर्निहित अर्थ के दबाव की पहचान कराता है।परिवर्तीत सामाजिक परिस्थिति में हर मनुष्य अपने एकांकी पन के अहसास से व्यथित और पीड़ित है।

xxvi अंधेरे के साथ -- इब्राहीम शरीफ

'अंधेरे के साथ' इब्राहीम शरीफ जी का एक महत्त्वपूर्ण उपन्यास कहा जा सकता है। लेखक ने आज की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक परिस्थितियों के बीच पिसते,जूझते और जीने के लिए विवश आम मनुष्य की दयनीय दशा का प्रभावशाली चित्रण प्रस्तुत किया है।

आधुनिक युग का परिवेश अपनी पारम्परिक परिस्थितियों से अनेक रूपों में विकसनशील, वैज्ञानिक एवं मानवतावादी हितों के अनुकूल कहा जा सकता है। तथापि आज भी नयी पीढ़ी का निर्दोष आम युवक भी समाज और धर्म के ठेकेदार बने, मानवता-विरोधी भ्रष्ट, स्वार्थी, अत्याचारी, आततायियों के अन्याय से लड़ने-जूझने के लिए मजबूर है। समाज विरोधी ऐसी अदृष्ट दानवीशक्तियों का पर्दाफाश करके लेखक ने नयी पीढ़ी के जनमानस की आत्मशक्ति और सत्य के लिए संघर्षरत रहने वाली शक्ति का प्रशंसात्मक निरूपण किया है।

एक नवयुवक जीवन के हर मोड़ पर संघर्षरत रहता हुआ अनेक दुःखो को झेलता हुआ अन्त में निराश उदास होकर आत्मबलिदान के लिए मजबूर होता है। समुद्र तट पर बैठकर यह युवक अपने अतीत के संघर्षयुक्त जीवन का पुनः स्मरण करता है। उसके मानस-पटल पर समाज के ठेकेदारों के अन्याय के एक-एक चित्र उभरकर सामने आने लगते हैं।

यह नवयुवक एक सरकारी दफ्तर में नौकरी करता था। दफ्तर का अफसर आर्थिक शोषण के उद्देश्य से इस नवयुवक की तन्खाह में से कुछ रूपयों की माँग करता है। युवक का प्रामाणिक मन, अफसर को घूस देने के लिए राज़ी नहीं होता है। परिणाम-स्वरूप उसे नौकरी छोड़ने के लिए मज़बूर किया जाता है। घर की आर्थिक स्थिति अच्छी न थी अतः पिता को इस बात से धक्का लगता है और वे बेहोश हो जाते हैं। बेटा पैसे के अभाव में पिता के इलाज के लिए किसी अच्छे डॉक्टर की मदद भी नहीं जुटा पाता। परिणामस्वरुप पिता की मृत्यु हो जाती है।

युवक घर की दयनीय दशा से आहत होकर ग्राम-पंचायत के चेयरमैन के पास जाता है। गाँव में चुनाव की तैयारियॉ चल रहीं थीं। मुस्लिम चेयरमैन चालिस रूपये माहवार पर उसे नौकरी पर रख लेता है। युवक के हाथ में मतदाताओं की सूची थमाते हुए आदेश देता है कि "इन सारे नामों को पढ़ जाओं,बीच-बीच में से हिन्दू मतदाताओं के कुछ नाम काटते चलो, कुछ नामों के सामने मृत लिख दो। साथ ही अपने मज़हबी भाईयों के नाम के साथ कुछ और नाम जोड़ते चलो।"[128] मुस्लिम होते हुए भी हिन्दुओं के प्रति

अन्याय को युवक का मन स्वीकार नहीं कर पाता। गरीबी में भी अपने पाक ह्रदय को वह फिर से दर-दर भटकने लगा। गाँव के एक पुराने मन्दिर की मरम्मत का काम सरकार की ओर से आरंभ होता है। युवक वहाँ भी मज़दूरी के लिए अपना भाग्य आजमाता है।समाज की धार्मिक संकीर्णता ने वहाँ भी उसका पीछा न छोड़ा। हिन्दू-मुस्लिम के धार्मिक तनाव की संभावना से उसे वहाँ से भी निकाल दिया गया। जीवन के इन संघर्षों के दिनों में माँ भी एक दिन बेटे का साथ छोड़कर मृत्यु के मुख में चली जाती है। अब बहन की देखभाल की जिम्मेदारी भी बढ़ जाती है। निराश होकर नवयुवक गाँव के प्रेसिडेन्ट के पास पहुँचता है। प्रेसिडेंन्ट ने उसकी दर्दभरी कहानी से करूणा जताते हुए मदद में दस रूपये दिये। प्रामाणिक नवयुवक ने आत्मसम्मान की रक्षा करतें हुए कहा, बिना काम किये रूपये लेना मुझे मंजुर नहीं। प्रेसिडेन्ट ने इलेक्शन के काम के लिए मदद चाही तो तुरन्त युवक ने स्वीकार कर लिया। क्योंकि प्रेसिडेन्ट, चेयरमैन के खिलाफ चुनाव में खड़े हो रहे थे। युवक चेयरमैन को हराना अपना कर्तव्य समझता है। प्रेसिडेन्ट जब युवक को जुलूस में चलने के लिए कहता है तो युवक उत्साह दिखाते हुए कहता है "क्यों नहीं चलूँगा...... उसे पता तो चल जाये कि मज़हब के आधार पर ही लोगों को जीता नहीं जा सकता...... मज़हब का बच्चा कहीं का। "[129]

चेयरमैन के चुनावी भाषण के खिलाफ वह स्वंय भी कुछ दोस्तों को इकट्ठा कर भाषण देना शुरू करता है। चेयरमैन की काली करतूतों का कच्चा चिट्ठा तो खोल देता है। लेकिन परिणाम के रूप में उसकी बहन हमेशा के लिए उससे जुदा हो जाती है। सह्रदयी नवयुवक इस सदमे से निराश और हताश होकर आत्महत्या के लिए चल पड़ता है। लेकिन अंत में समाज विरोधी ताकतों के सामने झुकने से अधिक संघर्षरत रहने में जीवन की सार्थकता का अनुभव करके जीवन की युद्ध-भूमि में इन ताकतों से लड़ने के लिए लौट आता है।

इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास आम मनुष्य के आशा-आकांक्षाओं, निराशा-प्रत्याशा तथा निरंतर जुझने वाली जीवन-शक्ति की यथार्थ और प्रभावशाली कहानी है।

अंधेरे के साथ' उपन्यास में निरूपित चेतना --

'अंधेरे के साथ' उपन्यास में इब्राहीम शरीफ़ जी ने बेकारी से उत्पन्न नवयुवकों की समस्या को प्रस्तुत करने के साथ ही साथ ऐसे लोगों की मानसिकता को भी प्रस्तुत किया है जो संकुचित वृत्ति रखते हैं और केवल अपने धर्म-सम्प्रदाय को ही प्राथमिकता देते हैं। दूसरे सांप्रदाय़ के प्रति कट्टर विरोधी होते हुए उनके विरूद्ध सोचते हैं और लोगों को इसके लिए कार्य करने के लिए उत्तेजित करते हैं।

आज आज़ादी के इतने वर्षो के बीत जाने के बाद भी हम हिन्दू-मुस्लिम के बीच विद्यमान वैर-भावना को खत्म नहीं कर पाये हैं। दोनों सांप्रदायों की आपसी वैर-भावना यहाँ तक बढ़ गई है कि नौकरी आदि संस्थाओं में भी अपने सम्प्रदाय के लोगों को भी प्रधानता दी जा रही है।

सांप्रदायिक समस्या के साथ ही साथ लेखक ने घूसखोरी, रिश्वत जैसी भ्रष्ट वृत्ति को भी अपने उपन्यास के माध्यम से हमारे समक्ष प्रेक्षित किया है। आज हम देखते हैं कि नौकरी आदि में उच्चपद पाने के लिए या मामूली सी नौकरी भी पाने के लिए ऑफिसर या क्लर्क के हाथ गर्म करने पड़ते हैं। तब कहीं जाकर नौकरी सुरक्षित रहती है। प्रस्तुत उपन्यास में भी जब युवक अपने मालिक को घूस के रूप में निश्चित धन राशि नहीं देता है तो उसे परेशान किया जाता है। अतः तंग आकर वह नौकरी ही छोड़ देता है।

उपन्यासकार 'शरीफ' ने समाज में व्याप्त इन बुराइयों के साथ आज के डॉक्टरों के पेशे पर भी कुठाराघात किया है। आज के डॉक्टरों ने अपना पेशा केवल धन कमाना बना लिया है। अर्थ-उपार्जना ही उनके जीवन का ध्यय बन गया है। समाज में डॉक्टरों का स्थान ईश्वर की तरह श्रद्धा का केन्द्र रहता है लेकिन आज के डॉक्टर इस उपाधि, इस दर्जे के हकदार नहीं कहे जा सकतें हैं। क्योंकि धन की चमक ने उन्हें अन्धा कर दिया है। उनकी दृष्टी में मरीज के जीवन की कोई कीमत नहीं रह गई है केवल धन ही उनकी दृष्टी में सर्वेसर्वा हो गया है। उसकी कीमत,उसकी भाषा ही जानते हैं। डॉक्टर की डिग्री देने के साथ ही साथ उन्हें एक छोटी सी शपथ भी दिलायी जाती है उसे वे डॉक्टर बनते ही भूल जाते हैं। प्रस्तुत उपन्यास में भी जब युवक अपने माता और पिता के बीमार होने पर डॉक्टर को लेने के लिए जाता है परन्तु डॉक्टर उसके साथ आने से साफ इन्कार कर देता है क्योंकि उसे यह अन्दाजा है कि वहाँ उसे फीस अधिक नहीं मिलेगी। परिणामस्वरूप युवक के माता-पिता की मृत्यु बिना इलाज के ही हो जाती है।

अतः लेखक ने इस उपन्यास के माध्यम से समाज में फैली हुई कुरीतियों की खुलकर आलोचना की है। शरीफ जी ने प्रस्तुत उपन्यास के अन्तर्गत युवक के माध्यम से समाज में व्याप्त कुरीतियों का विरोध करवाया है। यहाँ युवक उसी वर्ग के अन्तर्गत व्याप्त बुराइयों का पर्दा फाश करता है जिसका वह स्वयं अंग है। लेखक इस भावना को दिखाकर यह बताना चाहतें है कि अपने हितों के स्थान पर राष्ट्र के हितों को प्रमुखता देनी चाहिए। हमें प्रत्येक वर्ग के हितों का ध्यान रखना चाहिए। अपने धर्म, अपने सम्प्रदाय की संकुचित वृत्ति को त्यागना चाहिए, क्योंकि देश के संगठन के लिए यह अत्यावश्यक है कि हम उदार वृत्ति रखें, सभी धर्मो सभी सम्प्रदायों के हितो को प्राथमिकता दें।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम उपन्यास में प्रस्तुत सन्देश को

समझें और युवक की भाँति आगे आकर भ्रष्टाचार के विरूद्ध खुलकर विरोध प्रकट करें। समाज के समक्ष उसे खोलकर रख दें। देश की उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि हम भ्रष्टता के खिलाफ खुलकर आन्दोलन करें। इस तरह देश में एक नवीन चेतना का संचार होगा।

xxvii सबहिं नचावत राम गुसाई -- भगवतीचरण वर्मा --

भगवतीचरण वर्मा के 'सबहिं नचावत राम गुसाई' उपन्यास मे स्वाधीनता पूर्व के कुछ वर्षो से लेकर आज तक के जीवन की यथार्थ तसवीर को खींचने का प्रयत्न किया है। भारतीय जीवन धनपतियों, नेताओं और गुण्डों की मिली-जुझी शक्तियों से आक्रान्त और बरबाद हो रहा है इसी को भगवतीचरण वर्माजी ने प्रस्तुत उपन्यास में दिखाने का यत्न किया है।

उपन्यास का कथानक चार भागों में विभक्त है। प्रथम भाग में आज के व्यापारी एवं उद्योगपति का परिचय देते हुए घासीराम (दादा),मेवालाल(पुत्र) और राधेश्याम (पौत्र) को चित्रित किए गये हैं। घासीराम के पोते राधेश्याम के अन्नप्राशन संस्कार के दरम्यान बाप बेटे में झगड़ा होता है। अतः घासीराम दुःखी होकर तीर्थयात्रा पर निकल पड़ता है। पिता के जाने के बाद मेवालाल तिकड़म लगाकर घर के सामने वाली हवेली खरीदता है और एक कम्पनी खोल देता है। नगरपालिका के पार्क पर कब्जा करके मन्दिर बनवाता है साथ ही जातीयता और धर्म के नाम पर चन्दा भी इकट्ठा करता है। मेवालाल अपने पुत्र राधेश्याम को विलायत पढ़ने के लिए भेजता है। राधेश्याम इंग्लैण्ड में आई.सी.ए. की परीक्षा बीच में ही छोड़कर जैसुखलाल नामक मित्र के सहयोग से फलावर मिल की मशीन लगाकर अपने और अपने परिवार का कायाकल्प कर देता है। युद्ध काल के दौरान तीन फलावर मिलों, चार तेल मिलों,एक चीनी मिल का मालिक बन जाता है। बाद में ब्लैक मनी को बचाने के लिए प्रदेश के गृहमंत्री को पार्टी चन्दा के नाम पर रिश्वत देता है। इस प्रकार प्रथम खण्ड मे एक साधारण व्यापारी किस प्रकार धन-सम्पत्ति हथिया कर देश के ही नहीं बल्की विश्व के उद्योगपत्तियों में अपना स्थान स्थापित करता है।

दूसरे भाग में नाहर सिंह नामक एक डकैत के परिवार की कथा वर्णित है। नाहरसिंह (दादा), केहरसिंह (पुत्र) और जबरसिंह (पौत्र)। महिधर नामक ज़मींदार, डकैत नाहरसिंह को अपनी ज़मींदारी सौंप कर कलकत्ता चला जाता है। नाहरसिंह अपने मित्र गनेशी के साथ मिलकर डाका डाल अपना भरण-पोषण करता है। भभरी नामक प्रेमिका से शादी कर लेता है जिससे उसे केहरसिंह नामक पुत्र की प्राप्ति होती है। तत्पश्चात एक दिन डाका डालते वक्त पुलिस की गोली से नाहरसिंह की मृत्यु हो जाती है। केहरसिंह

ज़मींदार बनकर समाज में सम्मान्निय स्थान प्राप्त करता है। उसे पत्नी लक्ष्मी द्वारा जबरसिंह नामक पुत्र की प्राप्ति होती है। बड़ा होने पर वह अभ्यास के लिए आगरा जाता है। वहाँ जाकर वह काँग्रेस पार्टी का सदस्य बन जाता है। ठाकुराइन घनवंत कुंवर से शादी कर उच्चकुल से जुड़ जाता है।अपनी कूटनीतिपूर्ण चाल,गुण्डागर्दी और तिकड़म बाजी से वह विधायक बनता है और बाद में राज्य का गृहमंत्री भी बन जाता है।

तीसरे अंक में रामसमझु नामक ब्राह्मण के परिवार की कथा है। वह ब्राह्मण होते हुए भी शराब, माँस, मच्छी का बेहद शौकिन है।उसके घर रामसिंहासन नामक पुत्र का जन्म होता है। उच्चशिक्षा ग्रहण कर वह तालुका का कार्यभार सम्भालता है। रामसंजीवन पढ़ने के लिए विलायत जाता है। वहाँ से लौटते वक्त एक अंग्रेज मेम से शादी कर लेता है। रामसिंहासन के तीन पुत्र हैं -रामउदित, रामानुज और रामलोचन। इनमे से रामलोचन को छोड़कर दोनों ऐय्याशी हैं। पुत्रो की ऐय्याशी के कारण रामसिंहासन को पच्चास हजार का कर्जा हो जाता है। रामलोचन, राजा पृथ्वीपाल के पोते महिपालसिंह की सहायता से थानेदार और बाद में शहर का ड़ी. एस. पी. बन जाता है।

उपन्यास के अन्तिम भाग में उद्योगपतियों और काँग्रेस मंत्रियों की सांठ-गाँठ,मंत्रियों की आपसी फूट और उनकी शतरंजी चालें,मजदूर संघों के नेताओं के खोखले व्यक्तित्व,साहित्यिक गोष्ठियों में होने वाली खुशामद और झूठी नारेबाजी आदि का व्यग्यात्मक चित्र अंकित किया गया है।"[130] सेठ राधेश्याम गृह मंत्री जबरसिंह की सहायता से कृषि अनुसन्धान शाला और ट्रेक्टर की फैक्टरी खोलने के नाम पर सरकार से ज़मीन प्राप्त करता है। लेकिन किसानों के विरोध के कारण वह भूमि पर कब्जा नहीं कर पाता है। रामलोचन अपने डी. एस. पी. पद की गरीमा को ईमानदारी से निभाते हुए कृषि अनुसंधान शाला के उद्घाटन पर राधेश्याम को गिरफ्तार कर लेता है। रामलोचन के इस कार्य से गृहमंत्री नाराज़ होकर उसे मुअत्तल कर देते हैं । जबरसिंह उसे माँफी माँगने के लिए कहते हैं परन्तु वह नौकरी से इस्तीफा दे, चुनाव लड़ने की ठान लेता है। वह आगर क्षेत्र से जबरसिंह के सामने खड़े होकर उसे बारह सौ नौ वोटों से हरा देता है। इस प्रकार वह विरोधी पक्ष का महत्वपूर्ण सदस्य बन जाता है।

' सबहिं नचावत राम गुसाई ' उपन्यास में लेखक ने स्वतंत्र भारत की एक सच्ची और व्यंग्यपूर्ण तस्वीर हमारे सामने पेश की है।

उपर्युक्त सत्ताईश सामाजिक उपन्यासों के अतिरिक्त आलोचनात्मक विवरणों[131] के आधार पर कतिपय अन्य उपन्यासों के नाम भी प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत शामिल किये

गए हैं जो निम्नलिखित है ---

(i)'दासता के नये रूप' (गुरूदत्त रचित),'सामर्थ्य और सीमा' (भगवतीचरण वर्मा), 'गिरते महल' (गुरूदत्त), 'जग की रीत' (श्री यादवेन्द्र शर्मा) कृत आदि।

उपन्यासों में धार्मिक एवं सांस्कृतिक चेतना की प्रधानता नहीं रही है। इन दोनों का समावेश राजनीतिक एवं सामाजिक पक्ष के साथ रहा है। अत: इनका अलग परिचयात्मक विवरण नहीं दिया है।

निष्कर्ष :--

प्रस्तुत अध्याय के पूर्ववर्ती पृष्ठो में औपन्यासिक कथा साहित्य का अध्ययन किया गया है। साठोत्तरकालीन लगभग सत्ताईस उपन्यासों के अध्ययन में राष्ट्रीय चेतना के विभिन्न स्वरूप को स्पष्ट देखा जा सकता है। इन उपन्यासों की कथावस्तु में निरूपित चेतना को ध्यान में रखते हुए अध्ययन की सुविधा एवं विषय की स्पष्टता की दृष्टि से इन्हें निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया गया है--

१) राजनीतिक चेतना से सम्बन्धित।

२) सामाजिक एवं आर्थिक चेतना से सम्बन्धित।

३) धार्मिक एवं सांस्कृतिक चेतना से सम्बन्धित।

राजनीतिक चेतना से सम्बन्धित उपन्यास देश के राजनीतिक परिवेश पर आधारित है। यद्यपि इनमें राजनीतिक घटनाक्रमों का प्रामाणिक निरूपण नहिवत है तथापि सम-सामायिक राजनीतिक परिवेश, राजनीतिक घटनाएँ, पात्रों एवं राजनीतिक सिद्धांतों के प्रभाव का प्राधान्य पाया जाता है। यद्यपि इनमें घटनाक्रमों या पात्रों का प्रामाणिक निरूपण नहिवत है तथापि काल्पनिक प्रसंगो की उद्भावना में उपन्यासकार के भोगे हुए परिवेश की गहरी छाप विद्यमान है। मनुष्य के अवचेतन मन में अनुभूति की सघनता ही नये रंग रूप सज़ा कर अभिव्यक्त होने के लिए जागृत मन को प्रेरित करती है। अत: कल्पना जगत की नींव पर आधारित रहती है। राजनीतिक चेतना से सम्बन्धित उपन्यासों की संख्या लगभग सोलह है।

अध्ययन की परिधि में आनेवाले ये सोलह उपन्यास मुख्यत: दो प्रकार के कहे जा सकते हैं :---

प्रथम जिनमें स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व की स्वातंत्र्य-आंदोलनकालीन देश की अराजक परिस्थितियों का आकलन है। ऐसे उपन्यासों में 'कितने चौराहे','तमस' 'छाको की वापसी','मुट्ठी भर कांकर','लौटे हुए मुसाफिर' आदि हैं।

स्वातंत्रता आन्दोलन की पृष्ठ भूमि पर लिखा गया 'कितने चौराहे' उन अज्ञात शहीदों के बलिदान और देश प्रेम की गौरव-गाथा है जो देश की आज़ादी के लिए

जीये और उसी के लिए अपने प्राण गँवाये। ऐसे अनगिनत शहीदों के बलिदान से देश ने आज़ादी की सुनहरी उषा का दर्शन किया है। लेखक ने आज़ादी के बाद जन्मी नयी पीढ़ी के लोगों को देश की स्वतंत्रता के लिए किये गये संघर्ष और अनेक शहीदों के बलिदान से अवगत कराया है। देश की जनता अपने पूर्वजों के बलिदानों से प्राप्त मूल्यवान आज़ादी की सुरक्षा के लिए जागृत रहे, यह आज हमारा राष्ट्रीय धर्म है। आज भी देश की सीमाएँ दुश्मनों की बुरी नीयत से पदाक्रांत है। आज भी जरूरत है कि हमारे नवयुवान मातृ-भूमि की आन-बान-शान को बनाये रखने के लिए अपने खून का एक-एक कतरा बहाने के लिए तत्पर रहें। अगर ऐसा रहा तो आज़ादी के लिए दी गई वीर शहीदों की कुरबानियाँ अकारथ न जायेगी।

स्वार्थी राजनीति ने देश की अखंडता को दो टुकड़ों में विभाजित कर दिया है। देश के विभाजन की दु:खद घटना के परिप्रेक्ष्य में 'तमस', 'छाको की वापसी'और 'लौटे हुए मुसाफिर' जैसे उपन्यास लिखे गये। इनके द्वारा अतीत की अराजक परिस्थिति के अत्यन्त करूण एवं विस्फोटक चित्र प्रस्तुत हुए हैं। धर्म की आड़ में देश के दुश्मनों ने दंगे फंसाद, मारकाट, आगजनी, छूरेबाज़ी एवं निर्दोषो के सामूहिक हत्याकाण्ड की वारदातों का एक ऐसा सिलसिला चलाया जिससे देश में अंधाधुंधी, भय और आतंक का घना कोहरा छा गया। 'तमस' में मानव संहार की ऐसी विनाशक लीला का तादृश्य वर्णन करके लेखक भारतीय जनता को आगाह करने का यत्न करते हैं कि फिर कोई शत्रु धर्म के नाम पर खून की होलियाँ खेलकर देश को तहस-नहस न करें। इन उपन्यासों में राष्ट्र की एकता और सुख-शान्ति को तबाह करने वाले तत्वों से अवगत कराया है ताकि जनता इनकी घिनौनी सूरत को ठीक से पहचान ले।

शरणार्थियों की समस्या मुख्य रूप से राजकीय परिस्थितियों की देन है। भारत जैसे विशाल देश में यह समस्या अपने व्यापक स्तर पर उलझी हुई है। विस्थापित शरणार्थियों को सरकारी आश्रय प्राप्त होते हुए भी उनके जीवन-संघर्ष में दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती रहती है। 'लौटे हुए मुसाफिर' और 'मुट्ठी भर कांकर' जैसे उपन्यासों में लेखक ने भटकन की जिन्दगी जीनेवाले शरणार्थियों के कष्टमय जीवन-संघर्ष की झाँकियाँ प्रस्तुत करके देश की जनता का ध्यान उनके प्रति आकृष्ट किया है। वर्तमान की यह एक ऐसी विकट समस्या है, जो जनता के उदार सहयोग के बिना केवल सरकार द्वारा वर्षों तक सुलझ नहीं पायी। देश के सीमावर्ती राज्यों में यह संकट अधिक गहरा हो, इससे पूर्व शरणार्थियों को पुन: स्थापित करने के सघन यत्न आवश्यक हैं। सरकार जनता के सहयोग से कुछ ऐसे आयोजन करे जिससे इस समस्या का निराकरण हो और दीन-दु:खी लोग राहत की साँस लें।

इन दो उपन्यासो द्वारा देश की शरणार्थियों की गम्भीर समस्या के कारण और परिणाम को उजागर करके,उसे सुलझाने का मार्ग दर्शन प्रस्तुत है। शरणार्थियों के प्रति प्रेम,भाईचारा,उदारता और सहयोग की भावना रखते हुए उन्हें पुन:स्थापित किया जाये। इस प्रकार समकालीन राजनीतिक एवं सामाजिक समस्या को सुलझाने का प्रयत्न सार्थक प्रतीत होता है।

दूसरे प्रकार के उपन्यासों में स्वातन्त्रयोत्तरकालीन राजनीतिक परिवर्तन एवं पतन के विभिन्न पहलूओं और स्वरूपों का व्यापक एवं यथार्थ चित्रण किया गया है। दिन-प्रतिदिन गहराते हुए देश के राजनीतिक संकट के प्रमुख कारणों का तादृश्य चित्रण इन उपन्यासों की प्रमुख विशेषता है।

'महाभोज','महामहीम','रागदरबारी','दारूल शफा',और 'एक और मुख्यमंत्री' नामक उपन्यासों में मुख्यरूप से राजनेताओं के भ्रष्ट, स्वार्थी चरित्र एवं शासननीति की आड़ में राजनेताओं की राष्ट्र वरोधी गतिविधियों का प्रभावशाली एवं यथार्थ चित्रण पाया जाता है।

'महाभोज' के दा साहब,सुकूलबाबू 'रागदरबारी' के बैधजी,'महामहीम' के चन्द्रिका प्रतापसिंह,लुभावन सिंह, 'दारूल शफा' के उत्सुकदास, कृष्णवल्लभ, रंगीनराय एवं लोबीराम 'एक और मुख्यमन्त्री' का अरविन्द आदि चरित्र समकालीन भ्रष्ट एवं कुटिल राजनेताओं के प्रतिबिम्ब है। इनके दोहरे चरित्र तथा जनहित विरोधी क्रिया-कलापों का विस्तृत परिचय इन उपन्यासों में प्राप्त है जो राष्ट्रीय हित के लिए घातक सिद्ध होते हैं।

सत्ता एवं पद को हथियाने या अपनी राजसत्ता को बनाये रखने के लिए व्यक्तिगत एवं दलीय स्तर पर चुनाव की लोकतांत्रिक प्रक्रिया में फैले भ्रष्टाचार के विविध स्वरूपों का यथार्थ चित्रण उक्त उपन्यासोंमें पाया जाता है। 'महाभोज','दारूल शफा', 'एक और मुख्यमन्त्री' आदि समकालीन राजनीतिक दलों की चुनावी हथकण्ड़े व्यापक रूप से दृष्टिगत होते हैं। चुनावी उम्मीदवारों के चयन में भाई-भतीजावाद,टिकिटों की खरीदी-बिक्री [132] राजकीय दलों की जोड़-तोड़, लोकप्रियता द्वारा वोट प्राप्ति के लिए लोक-कल्याणकारी योजनाओं की घोषणा, प्रचार माध्यमों का दूरूपयोग, गुंडागर्दी द्वारा दबाव, पूंजीपत्तियों से साँठ-गाँठ, साम्प्रदायिकता जातीवाद की नीतियाँ आदि समकालीन चुनाव की भ्रष्ट प्रक्रिया के यथार्थ चित्र इनमें निरूपित हैं। देश की लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की सफलता - असफलता जिस पर आधारित है वह चुनाव प्रक्रिया ही भ्रष्ट होकर दीमक की तरह शासन व्यवस्था को शनै: शनै: खोखला बना रही है। देश की अल्प जीवि केन्द्रीय एवं राज्य सरकारे तथा पतनोन्मुखी समकालीन राजकीय व्यवस्था के

मुख्य कारणों का स्पष्ट परिचय इनमें प्राप्त है।[133] जनतांत्रिक विफलताओं के परिणाम-स्वरूप जनता में फैले अविश्वास, अनिश्चितता , भय, अनैतिकता एवं जीवन मूल्यों का ह्रास आदि का सीधा सम्बन्ध भी देश की पतनोन्मुखी शासन व्यवस्था से ही कहा जा सकता है। राजनेताओं के दोहरे चरित्रों का उद्घाटन एवं लोक कल्याण या जनहित की आड़ में घोषित योजनाओं में व्याप्त कौभाण्डों का परिचय देकर,[134] देश की जनता को जागृत करने एवं राजकीय संकट से आगाह करने का स्तुत्य प्रयत्न इन उपन्यासकारों ने किया है।

मूल्यहीन राजनीतिक चरित्रों एवं भ्रष्ट शासकीय व्यवस्था के परिणामस्वरूप राजनीतिक पतन केवल केन्द्रीय सत्ता तक सीमित नहीं है अपितु सरकारी कार्यालयों के अफसारों अमलदारों एवं कर्मचारियों,पुलिसतंत्र के अफसरो तथा पुलिसकर्मियों, पंचायतों के पदाधिकारियों, सरकारी अर्धसरकारी संस्थानों, कोआपरेटिव मण्डलियों, शिक्षण संस्थानों, समाचार तंत्र एवं प्रचार माध्यमों, स्वास्थ्य सुधार के सरकारी अस्पतालों, कुदरती संकटों से प्रभावित लोगों की सहायता के लिए सरकारी आयोजनों में भी व्याप्त हैं। राजनीतिक क्षेत्र में फैले भ्रष्टाचार, अनाचार, कौभाण्ड आदि की विस्तृत जानकारी भी इनसे प्राप्त होती है। 'कटरा वी आर्जू ' जैसे उपन्यास में आपातकालीन परिस्थिति में जनता पर हुए अमानवीय अत्याचारों के विविध रूपों का प्रभावशाली निरूपण हुआ है, जिससे आम जनता की पीड़ा, कष्ट तथा संकट से उत्पन्न भयावस्था आदि का मार्मिक परिचय पाया जाता है।

राजनीतिक अध:पतन से केवल देश में राजनीतिक संकट ही उत्पन्न नहीं हुआ है अपितु इसके दुष्प्रभाव के परिणामस्वरूप देश की आम-जनता का जीवन भी मूल्यविहीन, भौतिकतावादी,स्वार्थी एवं तत्कालीन लाभ से प्रेरित ही रहा है।राष्ट्र आज सांस्कृतिक पतन की कगार पर खड़ा है। भविष्य की पीढ़ी को दिशाहीन और भ्रमित करने वाली समकालीन परिस्थितियों के निर्माण का उत्तरदायित्व भी उक्त राजनीतिक अद्य:पतन है।

'काली आँधी' जैसे उपन्यास, देश की राजनीतिक व्यवस्था में नारियों की योग्यता, कुशलता एवं महत्त्वपूर्ण योगदान को उजागर करते हैं। साथ ही राजनीतिक छल, कपट एवं षड़यंत्रों की गन्दगी में आकण्ठ डूबने वाली नारी चरित्र से एक चिन्ता यह उभर कर सामने आती है कि राष्ट्र के सांस्कृतिक घरोहर को वहन करने वाली देश की सन्नारियॉ भविष्य में भी उतनी ही सक्षम रह पायेगी जितनी अतीत के गौरवशाली नारी चरित्र थे ?

देश में समय-समय पर उठने वाली राष्ट्र विरोधी गतिविधियों के प्रत्यक्ष - अप्रत्यक्ष कारण रूप में भी हमारी भ्रष्ट राजनीतिक परिस्थितियाँ हैं जो 'समय एक शब्द भर नहीं है 'जैसे उपन्यास से स्पष्ट होती है। नक्शलवादी आन्दोलन के कारणो और मूल स्त्रोतों के प्रति अंगुलिनिर्देश से उक्त तथ्य परिपुष्ट होते हैं।

'जंगलतंत्रम्' उपन्यास अपनी विशिष्ट शैली के कारण राजनीतिक उपन्यासों

में विशिष्ट स्थान का अधिकारी है। सरकारी नेताओं की आपखुदशाही, उनकी अर्थलोलुपता पूजीपत्तियों से साँठ-गाँठ, अराजक शासन व्यवस्था से त्रस्त निरीह जनता की पीड़ा, आदि विषय को पशुचरित्रों के माध्यम से लेखक ने प्रतीकात्मक शैली में प्रस्तुत किया है। अत: यह एक व्यंग्यात्मक राजनीतिक उपन्यास कहा जा सकता है।

साठोत्तरी उपन्यासों में 'आधा पुल' उपन्यास अपने विशिष्ट विषय-निरूपण के कारण एक महत्वपूर्ण उपन्यास कहा जा सकता है। औपन्यासिक कथा, राजनीतिक जीवन से सीधा सम्बन्ध नहीं रखती है। इसमें सैनिक जीवन की विभिन्न झाँकियाँ प्रस्तुत की गई हैं। देश की भौगोलिक सुरक्षा का उत्तरदायित्व निर्वाह करने वाले सैनिकों का राष्ट्र-प्रेम हमारे राजनेताओं के देश-प्रेम से श्रेष्ठ, गौरवशाली और कल्याणकारी है। लेखक ने अमर शहीदों की वीरता और शहादत का प्रशंसनीय चित्रण प्रस्तुत किया है। सैन्य कारवाई या देश की सुरक्षा सीधे शासन व्यवस्था से सम्बन्ध रखती है। अत: उपन्यास का स्थान पहले प्रकार के उपन्यासों में हमने दिया है।

सामाजिक एवं आर्थिक उपन्यासों के परिचयात्मक विवरण से स्पष्ट है कि इनमें देश के सामाजिक परिवेश एवं आर्थिक परिस्थितियों के विभिन्न पहलूओं को उद्‌घाटित किया गया है।

सामाजिक उपन्यासों में 'पचपन खम्भे लाल दीवारें','अन्धेरे बन्द कमरे',एवं 'नदी फिर बह चली' नामक उपन्यास नारी-विषयक हैं। परिवार में नारी की दयनीय एवं शोषित स्थिति, नारी जीवन के आंतर-बाह्य पहलू सामाजिक क्षेत्र में नारी की भूमिका, सामाजिक-विकास में उसका योगदान, एवं व्यक्तित्व विकास के लिए जूझने वाली शक्ति के रूप में नारी के विविध रूप पाये जाते हैं।

हिन्दी के साठोत्तरी सामाजिक उपन्यासों में नारी-जीवन की विभिन्न झाकियॉ प्रमुख है। आधुनिक युग में शिक्षित नारियाँ घर और घर के बाहर के दोहरे उत्तरदायित्व का निर्वाह करती है फिर भी पुरूष, परिवार और समाज नारी के प्रति हीन और उदासीन भावना से ग्रसित है। अत: वह शोषित, पीड़ित एवं मानसिक रूप से व्यथित जीवन जीने के लिए मज़बूर होती है। उषा प्रियंवदा ने अपने उपन्यास में प्रधान नारी चरित्र, सुषमा के द्वारा समकालीन मध्यमवर्गीय नारियों की कुंठित, पीड़ित, शोषित दशा तथा संघर्षशील स्थितियों का मार्मिक निरूपण किया है। सदियों से नारी शारीरिक एवं मानसिक अत्याचारों का शिकार होती आ रही है। पारिवारिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्व का गुरू-भार वहन करने पर भी उसकी कोमल भावनाओं को निर्ममता से कुचला जा रहा है।

'नदी फिर बह चली' नामक उपन्यास में ग्रामीण अंचल की अशिक्षित नारी पर होने वाले जुल्म और अत्याचारों का यथार्थ चित्रण पाया जाता है। परबतियाँ अपनी

मासूम बाल्यवस्था में मामी और सौतेली माँ के अत्याचारों का शिकार होती है, युवावस्था में पति द्वारा पीड़ित और अन्त में समाज के क्रूर और निर्मम हाथों से संघर्ष करते हुए मृत्यु को प्राप्त होती है। 'अग्निबीज' में ग्रामीण क्षेत्र की नारी पर हुए अत्याचार और उसकी दुर्भाग्यपूर्ण जीवन की कतिपय झाँकियाँ प्राप्त होती है। इस प्रकार अत्याचारों को झेलती, जूझती नारी जीवन की त्रासदी एवं अवदशा का विशद चित्रण साठोत्तरी सामाजिक उपन्यासों में पाया जाता है।

राजनीतिक उपन्यासों में भी यत्र-तत्र नारी पर हो रहे अत्याचार एवं उनकी दयनीय स्थिति का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत है, यद्यपि वे गौण हैं।

सामाजिक उपन्यासों की दूसरी विशेषता नारी के व्यक्तित्व में आ रहे बदलाव, विकास तथा उनकी जागृत चेतना से सम्बन्धित है। सरकारी नीतियों, शिक्षण का प्रचार, जीवन के प्रति बदलता हुआ सामाजिक दृष्टिकोण, प्रचार माध्यमों का अत्यधिक प्रभाव, पाश्चात्य संस्कृति का आकर्षण, आर्थिकोन्मुखी एवं भौतिकवादी जीवन का अभिगम आदि के कारण समाज के हर वर्ग की नारियों के व्यक्तित्व एवं जीवन में बदलाव आया है। आधुनिक युग की नारियाँ अब घर की चार दिवारों के बीच सीमट कर नहीं रहती है। नये परिवेश और कार्य के अनुरूप वे अपने आप को ढालने लगी है। आधुनिक नारी अब आश्रित, निरीह, दबी और पराधीन नहीं है। साथ में यह भी स्पष्ट है कि परिवार और समाज के बन्धनों से उसने अपने आपको पूर्णत: मुक्त नहीं किया है। तथापि उनमें आ रहे वैचारिक परिवर्तन के कारण नारी-जीवन की स्थिति में अब निश्चित रूप से बदलाव आ रहा है।

'पचपन खम्भे लाल दीवारें','अन्धेरे बन्द कमरे','नदी फिर बह चली' जैसे नारी प्रधान उपन्यासों के अतिरिक्त 'काली आँधी','जल टूटता हुआ' आदि उपन्यासों के नारी पात्र भी इस बात का प्रमाण है। इन नारी-पात्रों से स्पष्ट है कि, बौद्धिक क्षमता, सूझबूझ,एवं योग्यता की दृष्टि राजनीतिक, सामाजिक एवं कला आदि विभिन्न क्षेत्रों में वे सफल सिद्ध हुई है।

'अन्धेरे बन्द कमरे' की नीलिमा पति की अनिच्छा, मनमुटाव, रोष आदि के बावजूद अपनी रूची के अनुरूप एक विशिष्ट कलाकार के रूप में अपने व्यक्तित्व का निर्माण एवं निखार करती है। वह निरन्तर अपने अधिकार और आत्म-विकास के लिए जूझती रहती है। 'काली आँधी' में मालती भी अपने राजनीतिक व्यक्तिगत को बनाने के लिए अनेक कष्टों का सामना करती है। अन्य उपन्यासों में परबतिया, आशु, संध्या, जया, भागोबहन, लवंगी जैसे आधुनिक नारी पात्र केवल अपने व्यक्तिगत न्याय और अधिकार के लिए ही संघर्षशील नहीं है अपितु समाज के पीड़ित, दु:खी, उपेक्षित एवं अभावग्रस्त लोगों के अधिकार और न्याय की लडाईयों में भी वे अपने साहस, शौर्य और बलिदान का परिचय

देती है। अतः यह कहा जा सकता है कि आज की भारतीय नारी अपने सामर्थ्य, सूझबूझ, निष्ठा, कर्मठता, साहस, शौर्य,समर्पण एवं बलिदान की भावना आदि के बल पर देश के सभी क्षेत्रों के विकास में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रही है। फिर भी यह अवश्य कहा जा सकता है कि साहित्य में अभी भी कतिपय क्षेत्रों की नारियों के सफल एवं आश्चर्यजनक योगदान का परिचय प्राप्त नहीं होता है। जैसे पुलिस तथा न्यायालय, वैज्ञानिक-संशोधन, सैन्य-सुरक्षा, स्वास्थय एवं आरोग्य के क्षेत्र, अंतरराष्ट्रीय संबंधों में सरकारी प्रतिनिधित्व के क्षेत्र आदि ।

कतिपय सामाजिक उपन्यासों में गौण रूप से दहेज प्रथा से उत्पन्न सामाजिक,आर्थिक दुष्परिणामों को वर्णित किया गया है। आज के शिक्षित मानव- समाज में दहेज जैसी सामाजिक विकृती के लिए कोई स्थानहोना नहीं चाहिए, लेकिन निरंतर बढ़ती हुई भौतिक, वैज्ञानिक सुविधाओं ने मनुष्य को उपभोक्ता संस्कृति का दास बनाया है। भौतिक्तावादी दृष्टिकोण तथा सांस्कृतिक मुल्यों के पतन के परिणाम स्वरूप दहेज की कुप्रथाआज भी पली बढ़ी है। उदाहरण स्वरूप 'जल टूटता हुआ 'उपन्यास में गाँव के सुग्गन मास्टर की दयनीय दशा एवं चिंताजनक परिस्थिति का मुख्य कारण बेटी के विवाह के लिए दहेज का न जुटा पाना है।

भारतीय समाज की आज सर्वाधिक चिंताजनक परिस्थिति है सामाजिक एवं पारिवारिक विघटन की। साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक एवं पारिवारिक विघटन की स्थिति का यथार्थ निरूपण पाया जाता है। 'तमस ',' दासता के नये रूप ','लौटे हुए मुसफिर' आदि में देश के विभाजन की पृष्टभूमि में सामाजिक विघटन के सार्थक,यथार्थ एवं प्रभावशाली चित्रण पाये जाते हैं। देश का बाँटवारा चाहे ऊपरी तौर पर राजनीतिक कारणों से सम्बन्धित है, किन्तु इसके मूल में हिन्दू-मुस्लिमों की परस्पर संकीर्ण एवं कट्टारवादी भावनाएँ रही हैं। स्वार्थी लोंगो द्वारा अपने स्वार्थसिद्धि का यह प्रमुख एवं सशक्त साधन रही है। धार्मिक असहिष्णुता ने आज भी देश के सामाजिक ढाँचे को झकझोर दिया है। समय-समय पर दंगे, फसादों, आगजनी, छूरेबाज़ी आदि विघटनकारी परिस्थितियों द्वारा देश में अराजकता एवम् अव्यवस्था फैलाकर भय, आतंक और त्रासदी का वातावरण निर्मित किया जाता है, जो देश के सामाजिक संगठन, आर्थिक विकास, शान्ति और समृद्धि के मार्ग में अवरोधक सिद्ध होता है।

शेष उपन्यासों में पारिवारिक विघटन के अनेक रूप पाये जाते हैं। कहीं संयुक्त परिवार का बिखराव है तो कहीं दाम्पत्य जीवन की कटुता। आज़ादी के बाद सामाजिक परिवेश इस तेजी से बदंले कि संस्कृति की अवहेलना शुरू हुई और लोग दिग्भ्रम हो गये।"[135] इन उपन्यासों में पारिवारिक बिखराव के अनेक कारणों को दर्शाया गया

है, जैसे मानव चरित्र में सांस्कृतिक मूल्यों की गिरावट,उपभोक्तावादी एवं भोगवादी जीवन का अभिगम,जीवन में अर्थ की महत्ता,आर्थिक स्वतंत्रता,बौद्धिकता का बोलबाला,स्वकेन्द्री जीवन, आधुनिक भावबोध आदि।

'सामर्थ्य और सीमा' में राजासाहब का परिवार आर्थिक संकट के कारण उजड़ जाता है। 'नदी फिर बह चली' और 'काली आँधी' में राजनीतिक-सामाजिक प्रभाव एवं आधुनिकता के भावबोध के परिणाम स्वरूप पति-पत्नी के सम्बन्धों में कटुता उत्पन्न होती है। 'अन्धेरे बन्द कमरे' की नायिका स्वच्छन्द जीवन-शैली एवं व्यक्तिवादी चेतना के दुष्परिणामस्वरूप पति से विलग होती है। 'अपने लोग' और 'गिरते महल' में अवसरवादी मानसिकता, स्वार्थ, लोलुपता, भावना के स्थान पर बौद्धिकता का महत्व, समष्टि के स्थान पर व्यष्टिवादी दृष्टिकोण, धर्म में अनास्था, पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव एवं जीवन मूल्यों के स्थान पर अर्थ की प्रधानता आदि के परिणाम स्वरूप संयुक्त परिवारों की टूटन का यथार्थ चित्रण पाया जाता है। 'सबहिं नचावत राम गुसाई' में पारिवारिक कलह का कारण दो पीढ़ियों के वैचारिक संघर्ष है। नयी पीढ़ी अर्थवादी दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप अनैतिक एवं मूल्यहीन जीवन को प्रधानता देती है। कहना न होगा कि इनमें प्राप्त सम्बन्धों की कटुता एवं पारिवारिक विघटन के चित्र देश की समसामयिक सामाजिक परिस्थिति के प्रतिबिम्ब है।

आधुनिक भारतीय समाज की एक अन्य महत्वपूर्ण समस्या है देश के पीड़ित व्यथित, गरीब, निम्नवर्गीय लोगों की। दो सौ साल तक की विदेशी शासको की गुलामी से मुक्ति पाकर भारतीय जनता ने राहत की साँस अवश्य ली, लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के पचास साल बाद भी कुछ बदनसीब लोग ऐसे हैं जो आज भी गुलामों की तरह जीवन जीने के लिए मजबूर हैं। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में लोकतांत्रिक समाजवादी व्यवस्था लागू की गई है। लेकिन उसके परिणाम सुखकर नहीं निकले। आज भी दलित-शोषित, शोषण की चक्की में निरन्तर पिसता रहा है। भारत का लोकतांत्रिक समाजवाद मानव-मानव में व्याप्त वैमनस्य भाव, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनीतिक असमानता तथा भेदभाव को समाप्त कर सब में सम-भाव की स्थापना करना चाहता है।लेकिन आज इस भ्रष्टाचारी शासन-व्यवस्था में नेताओंने पूंजिपतियों से साँठ-गाँठ करके अपनी स्वार्थपूर्ति की है। अत: शोषित दिनप्रतिदिन अधिक शोषित- पीड़ित बनता रहा है। देश की निरीह शोषित पीड़ित लोगों के दुर्भाग्य पूर्ण स्थिति का कारण है समाज के सम्पन्न, सशक्त, स्वार्थी पूँजीपत्ति, सवर्ण लोग और भ्रष्ट राजनेता, इनकी आपखुदी और अत्याचार से निम्नवर्गीय लोग आज भी दयनीय दशा में जीवन जी रहे हैं। भारत सरकार इनके उद्धार के लिए कथित रूप से निरन्तर सक्रिय एवं आयोजनबद्ध रही है तथापि आज भी देश के गाँवों में गुलामो सी अवदशा में जीने वाले

लोगों की कमी नहीं है। हिन्दी उपन्यासकारों ने निम्नवर्गीय लोगों की दुर्दशा का मार्मिक चित्रण करते हुए समस्या के कारण और निराकरण को यथासम्भव प्रस्तुत किया है।

'धरती धन न अपना','जल टूटता हुआ','अलग-अलग वैतरणी','अग्निबीज' आदि प्रमुख उपन्यास है, जिनमें गॉव के जमींदारों की जोहुकमी, अत्याचार और दमन का शिकार बने हुए भूमिहीन, गरीब, दु:खी, निम्नवर्गीय लोगों की दुर्दशा के मार्मिक चित्रण प्राप्त होते हैं। जमींदार हरनामसिंह 'जीतू' की ऐसी निर्मम पिटाई करता है कि वह बेहोश हो जाता है। 'जल टूटता हुआ' में सवर्णों द्वारा 'हँसिया' नामक हरिजन युवक की पिटाई होती है। इसी तरह 'अलग अलग वैतरणी' में भूख से पीड़ित 'झिनकू' मज़दूरी माँगने पर ज़मीदार द्वारा मारा, पिटा जाता है। 'अग्निबीज' में 'सूरज अहीर' और 'बाकर' भी ज़मींदारों के जुल्म का शिकार बनते हैं। 'धरती धन न अपना' के ज़मींदार बाढ़ के पानी से हुए फसल के नुकसान का भुगतान चमारों से नि:शुल्क खेत-मजदूरी करवा कर करना चाहते हैं। 'अग्निबीज' का पण्ड़ित, आश्रम की हरिजन बालिका द्वारा घर का सारा काम करवाता है। 'महाभोज' में दलित और शोषित वर्ग पर पुलिस और लोकतांत्रिक समाजवादी व्यवस्था के भ्रष्ट राज़नीतिज्ञों के अत्याचार का विस्तृत निरूपण है। इससें स्पष्ट है कि आज भी भारत के गाँवो में हरिजनों का भाग्य विधाता गाँव के ज़मींदार, पण्डित, चौधरी आदि हैं। जो गरीबों की लाचारी का लाभ उठाकर उन्हें अनेकविध यातनाओं से पीड़ित करते हैं। वे ज़मींदारों की कृपा से जीते हैं और उनके रोष से मरते हैं। उनके पास अपने और परिवार के लोगों की भूख मिटाने के लिए न तो पर्याप्त अनाज़ है और न ही तन ढकने के लिए वस्त्र। ये सुविधाजनक आवास की कल्पना तक नहीं कर सकते। इनके भाग्य में दिन-रात अपने पालक मालिक की जी हजूरी करके परिश्रम करना मात्र है।

भारत-सरकार ने भूमिहीनों के उद्धार और ज़मींदारों के एकाधिकार को नष्ट करने के लिए ज़मीन उन्मूलन, पंचायती राज कानून आदि ग्रामीण क्षेत्रों की योजनाएँ आयोजित की है। लेकिन ज़मींदारो ने चालाकी से इन योजनाओं को असफल बनाकर अपने प्रभाव को ज्यों का त्यों बनाए रखने का यत्न किया है। 'जल टूटता हुआ','अग्निबीज'तथा 'अलग-अलग वैतरणी' के ज़मींदार महीपसिंह, जैपालसिंह और ज्वालासिंह अपनी ज़मीने बेच देते हैं। चुनाव में वे स्वयं विजयी बनते हैं या निम्नवर्गीय सुखदेव जैसे प्रतिनिधि को विजयी बनाते हैं। इस प्रकार ग्रामसभा पर अपना प्रभाव बनाये रखते हैं। 'अग्निबीज' में आश्रमशाला को दिया गया दान भी ज़मींदार का एक चुनावी धोखा था।

आज़ाद भारत के ग्रामीण कृषक एवं श्रमिक एक लम्बे अरसे तक दमित और अभिशापित रहे हैं लेकिन अब शनै: शनै: उनमें नयी चेतना जागृत होने लगी है। आधुनिक शिक्षा के प्रचार, प्रचार-प्रसार माध्यमों का प्रभाव, पाश्चात्य संस्कृति का आक्रमण तथा

सरकारी योजनाओं के परिणाम स्वरूप अब दलित और पीड़ित लोग अन्याय और अत्याचारों के विरूद्ध आवाज़ उठाने लगे हैं। 'धरती धन न अपना' का चरित्र नायक 'काली' चौधरियों के आर्थिक शोषण का विरोध करता है तो 'जल टूटता हुआ' में ज़मींदार महीपसिंह का नौकर 'जगपतिया' अन्याय के विरूद्ध विद्रोह करके ज़मींदार की नौकरी छोड़कर कामरेड बन जाता है। भूमिहीन मज़दूर अब अपने परिश्रम के बदले में गाली, मार, झिड़कियाँ आदि सहने के लिए बिल्कुब तैयार नहीं है। 'सतीश' इन दीन-दुखियों का प्रतिनिधित्व करते हुए जमींदार की जोहुक्मी को नष्टनाबूद करने का यत्न करता है।

'अग्निबीज' में आश्रमशाला के हरिजन युवक द्वारा पण्डित का विरोध इस बात का प्रमाण है कि वे अब उच्चवर्ग के शोषण को चुपचाप न सहेंगे। केवल पुरूष ही नहीं अपितु निम्नवर्ग की नारियों में भी इस नई चेतना की जागृति देखी जा सकती है।'अग्निबीज' में लेखक ने भागो बहन और भाईजी द्वारा ग्रामीण महिलाओं के उत्थान के लिए आश्रमशाला की स्थापना करके नारी-शिक्षा का प्रचार भी उक्त तथ्य को प्रमाणिक करने में सहायक कहा जा सकता है।'जल टूटता हुआ' की 'लंवगी','नदी फिर बह चली' की 'परबतिया' जैसे नारी पात्र इस बात का प्रमाण है कि गाँव की निम्नवर्गीय महिलाएँ भी अब अन्याय और अत्याचारों के विरूद्ध निर्भिकता से अपनी आवाज़ बुलन्द करने लगी है। वे न केवल शोषण के विरूद्ध अपनी रक्षा करती है अपितु निर्बल और निरीह लोगों के न्याय और अधिकार की भी रक्षा करती है। अत: यह कहा जा सकता है कि यद्यपि समाज का शोषित वर्ग आज भी दीन-दु:खी है लेकिन निकटवर्ती भविष्य में नयी चेतना के प्रकाश में समाज का यह अभिशापित अंग भी उद्धार और उत्थान की दिशा में अग्रसर होगा।भारतीय समाज का भविष्र्य निश्चित ही उज्जवल होगा ऐसी आशा और आकांक्षा का निहित संकेत भी इन उपन्यासों की महत्त्वपूर्ण देन है।

'जल टूटता हुआ' और 'अलग-अलग वैतरणी' में जमींदारों के शोषण से कृषकों की मुक्ति के लिए समुचित भूमिका का निर्माण किया गया है। इनमें अत्याचारों के विरूद्ध जन-जागृति के चित्रण उपलब्ध है। शिक्षित, प्रगतिशील पात्र के प्रयत्नों से उच्चवर्ग की जोहुकमी और अत्याचार शिथिल हो जाते हैं। अब मजदूरों,दलितों,पीड़ितो और शोषित वर्ग के लोग संगठित होकर शोषणों और अत्याचार के विरूद्ध आवाज़ उठाते हैं, आंदोलन करते हैं। 'एक और मुख्यमंत्री' में पूंजीवाद का विरोध एवं समाजवादी व्यवस्था का समर्थन करते हुए लेखक ने शोषितों को पूंजीवाद के खिलाफ क्रांति का आह्वान किया है।'[136] 'महाभोज' में जनता की एकता और उसकी शक्ति को प्रतिपादित किया गया है। 'दारूल शफा' में मज़दूरों और शोषितों की सरकार को समाजवादी व्यवस्था में मान्यता प्रदान की है। 'अलग-अलग वैतरणी' में शशिकान्त, देवनाथ और विपिन आदि आदर्श शिक्षक,

डॉक्टर के रूप में प्रयत्नशील हैं लेकिन दुर्भाग्य से गाँववासियों का समुचित सहयोग न मिलने पर पलायनवादी हो जाते हैं।

सामाजिक उपन्यासों में ग्रामीण जीवन की ऊपर वर्णित समस्याओं के अतिरिक्त कतिपय उपन्यासों के केन्द्र में नगर-जीवन की झाँकियों के द्वारा सामाजिक जीवन के नैतिक विघटन को प्रतिपादित किया है। 'अपने लोग' के लेखक ने नायक के माध्यम से मानव-जीवन में सांस्कृतिक मूल्यों का महत्त्व दर्शाया है। एक संस्कारी विवेकशील, मनुष्यता का पक्षधर प्रमोद अपने आस-पास की भ्रष्ट और अवसरवादी व्यवस्था से निरन्तर संघर्षरत है। पारिवारिक जीवन में परस्पर स्नेह भाव की महत्ता के स्थान पर अब भोगवादी संस्कारिता के कारण मनुष्य आर्थिक और मानसिक बोझ उठाता है। सत्ता सम्पत्ति की प्राप्ति के लिए मनुष्य और समाज के सांस्कृतिक पतन के कारण नायक का मन तीखे एहसास से भर उठता है।

लेखक गोरखपुर के माध्यम से देश के राजनीतिक, सामाजिक, शैक्षणिक, साहित्यिक,आर्थिक एवं पारिवारिक क्षेत्रों में मूल्यहीनता से उत्पन्न तनाव, व्यभिचार, भ्रष्टाचार आदि का विशद चित्रण करते है। प्रमोद के कॉलेज के शिक्षकों में जातिवाद का बोलबाला था। इस जातिवाद के कारण गुण्डे और आवारा लड़को के सारे गुनाह माँफ किये जाते हैं। दूसरे रामविलास जैसा प्रामाणिक शिक्षक को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ता है। समाज के स्वास्थ्य का उत्तरदायित्व निभानेवाले डॉ॰सूर्यकान्त छल-कपट से फूलवा की सम्पत्ति हड़प लेते हैं। रामविलास के पुत्र की मृत्यु के बावजूद गरीब बाप से वह फीस लेता है। लेखक ने डॉक्टर के द्वारा भ्रष्ट मूल्यहीन और मानवताविहीन चरित्र का निर्माण किया है। इनके द्वारा राजनीति के क्षेत्र में जातिवाद, भाई भतीजावाद एवं अर्थ की राजनीति का भ्रष्ट रूप प्राप्त है। लेखक ने जीवन के हर क्षेत्र में मूल्यों की गिरावट से उत्पन्न आंतर-बाह्य संघर्षो का प्रभावशाली निरूपण किया है। लेखक सामाजिक संघर्ष की भूमिका में प्रगतिशील समाजवादी चिन्तन का आधार प्रस्तुत करते हैं। अत: अपने पुत्र को सक्रिय रूप से साम्यवादी पक्ष में जुड़ते हुए देख आत्मतृप्ति की अनुभूति करता है।

'भ्रमभंग 'में भी आदर्श विचारधारा से उत्पन्न संघर्ष और हताशा, निराशा की कुंठा, बेरोजगारी आदि का यथार्थ चित्रण मिलता है। इब्राहीम शरीफ 'अंधेरे के साथ' उपन्यास में एक आदर्शवादी नवयुवा के जीवन-संघर्ष को प्रस्तुत किया है। सरकारी दफ्तर में आर्थिक शोषण का विरोध करने से नौकरी छुट जाती है। लेखक सामाजिक बुराइयों के साथ डॉक्टरों के पेशे में आयी नैतिक गिरावट के दुष्परिणामों को भी यहाँ उजागर करता है।

'सबहि नचावत राम गुसाई' में तीन पीढ़ियों के जीवन द्वारा समाज के विभिन्न क्षेत्रों में आये मूल्यों के पतन को निरूपित किया गया है। धासीराम का पुत्र बेईमानी से सम्पत्ति जोड़ता है तो पौत्र और अधिक सम्पत्ति का मालिक बनता है। डाकू नाहरसिंह का पुत्र केहरसिंह कूटनीति, गुण्डागर्दी आदि द्वारा राजनीति का विधायक बन जाता है। ब्राह्मण परिवार की कथा में रामलोचन डी.एस.पी. बनता है। अन्त में उद्योगपति और काँग्रेस मंत्रियों की साँठ-गाँठ बनती है।

इस प्रकार साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में पारिवारिक विघटन, नारी-शोषण, नारियों के व्यक्तित्व में आ रहे बदलाव, समाज के विभिन्न क्षेत्रों में नारियों का योगदान, दलित-गरीब वर्ग का पूंजीवादीयों द्वारा शोषण, उन पर हो रहे सामाजिक-आर्थिक अत्याचार लोकतांत्रिक समाजवादी चिन्तन का प्रभाव, शोषितों एवं निम्नवर्गीय लोगों में प्राप्त नई जागृत चेतना, नगरीय जीवन के विभिन्न पहलूओं और सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों में आई सांस्कृतिक पतन आदि विभिन्न समस्याओं का परिचय प्राप्त होता है। इससे स्पष्ट है कि देश का सामाजिक जीवन आज बिखराव, संघर्ष, अनैतिकता, मूल्यहीनता के कारण पतन के गर्त में गिरता जा रहा है जो राष्ट्र के लिए एक चिन्ताजनक परिस्थिति का परिचायक कहा जा सकता है। दूसरी ओर कतिपय संकेत, नव जागृति, नये समाज की रचना, सामाजिक संगठन, सुधारवादी और समानता की विचारधारा से प्रेरित नई पीढ़ी के आगमन से सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया पायी जाती है।

भारत का सनातन धर्म समस्त विश्व में प्राचीनतम है। इसमें व्यक्ति को ऐसा उदात्त बनाने का मार्ग निहित है जो न केवल समष्टि तक व्याप्त होता है अपितु अपने तात्विक स्वरूप को प्राप्त करके जन्म-मृत्यु के बन्धन से मुक्त हो जाता है। सदियों पूर्व से विकसित हुआ यह सनातन धर्म समय-समय पर अनेक विचारधाराओं, दार्शनिक सिद्धान्तों एवं धर्म साधनाओं से विकसित होता हुआ युगीन परिवेश के अनुरूप मानव-मन की भावनाओं और विश्वास का आधार बनता रहा है। अनेक विदेशी जातियाँ इसके उदात्त रूप में एकाकार होती गई, लेकिन तलवार के बल पर धर्म-प्रचार का उद्देश्य लेकर आनेवाला मुस्लिम धर्म देश के सनातन धर्म के विविध रूपों के विरोध में बराबर अपना अलग अस्तित्व बनाकर चलता रहा। हिन्दू धर्म के अन्तर्गत धार्मिक मत-मतान्तर अवश्य थे लेकिन वे परस्पर इतने कटु और हिंसक नहीं थे। भारत में साम्प्रदायिक विद्धेष और धर्मभेद की विषाकत जड़ो की बुआई मध्ययुग या राजपूत-मुगल युग में हुई। मुस्लिम शासन के दरम्यान इतिहास के अनेक पृष्ठ हिन्दुओं के रक्त से रंजित हुए। धार्मिक मतभेद ईश्वरीय भेद से उत्पन्न नहीं है अपितु मनुष्य की धार्मिक कट्टरता और असहिष्णुता से उत्पन्न है। धर्म वास्तव में परस्पर स्नेह और समभाव युक्त उदात्तता सिखाता है क्योंकि धर्मों में कोई मुलभूत अन्तर नहीं होता है।[137]

मध्ययुग में अकबर के शासन-काल को छोड़कर १७वीं शताब्दी तक हिन्दू धर्म तलवार के भय से आतंकित और भयभीत रहा। अंग्रेजो के शासन काल में हिन्दू और मुस्लिम दोनों धर्म के अनुयायी गुलामी की अवस्था में जी रहे थे फिर भी दोनों एक न होने पाए। स्वार्थी अंग्रेजों ने अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए दोनों को एक न होने दिया। मध्ययुग में भक्ति आन्दोलन द्वारा पारस्परिक वैमनस्य को मिटाकर धार्मिक एकता और सामाजिक संगठन स्थापित करने का यत्न किया लेकिन आधुनिक काल में अंग्रेजों की कूटनीति ने इनमें ऐसी फूट डाली जिसके दुष्परिणाम स्वरूप देश का विभाजन हुआ। स्वातंत्र्योत्तर काल में धर्म-निरपेक्ष देश की परिकल्पना के कारण स्थिति कुछ बदली अवश्य किन्तु धार्मिक-सांप्रदायिक वैमनस्य का सर्वथा उन्मूलन नहीं हो सका। धर्माधिकारियों और सत्तालोलुप भ्रष्ट राजनेताओं ने अपनी-अपनी खिचड़ी पकाने के लिए धार्मिक दंगे-फसाद द्वारा पुनः साम्प्रदायवाद और धर्मभेद की विषाकत स्थिति का निर्माण किया है। वास्तव में यह स्थिति देश की उन्नति, एकता एवं राष्ट्र की सुरक्षा में बाधक सिद्ध होती है। अतः अनेक उपन्यासों में इस धार्मिक संकट के दुष्परिणामों से अवगत कराया है--

हमारे आलोच्यकालीन उपन्यासों के अध्ययन से स्पष्ट है कि 'तमस', 'छाको की वापसी','लौटे हुए मुसाफिर','हज़ार घोड़ो का सवार','धरती धन न अपना', 'महामहीम' जैसे उपन्यासो में धार्मिक चेतना के निभिन्न तथ्यों को निरूपित किया गया है।

'तमस' उपन्यास में भीष्म साहनी ने देश की विभाजन की भूमिका पर धार्मिक असहिष्णुता और कट्टरता के दुष्परिणामों का मार्मिक चित्रण करते हुए देश की सर्वागींण उन्नति में इसे बाधक सिद्ध किया है। हिंसा और धार्मिक संकिर्गता किसी भी राष्ट्र के विकास में सहायक सिद्ध नहीं होती है। निर्दोष जनता की पीड़ा और दयनीय स्थितियों के मार्मिक चित्रण द्वारा यह स्पष्ट किया है कि धर्मान्धता मानवता का शत्रु है। धर्मान्धता के कारण मनुष्य, निर्दोष मनुष्य की हत्या करने से भी हिचकिचाता नहीं है। सर्वत्र, अराजकता, अविश्वास, भय और चिंता का साम्राज्य छा जाता है। 'छाको की वापसी' में भी इसी प्रकार धार्मिक-संघर्ष से उत्पन्न विकट परिस्थितियों एवं लोगों की दयनीय स्थिति का चित्रण किया गया है।

'लौटे हुए मुसाफिर' में विभाजन से पूर्व हिन्दू-मुस्लिम समाज के बीच परस्पर सहयोग, मेल-मिलाप एकता और समन्वय का सुन्दर निरूपण किया है जो जनता के लिए एक सन्देश है।

'हज़ार घोड़ो का सवार' और 'धरती धन न अपना' उपन्यासो में क्रमशः मुस्लिम और ईसाई धर्म के अनुयायियों द्वारा धार्मिक परिवर्तन की हो रही राष्ट्र विरोधी

प्रवृत्तियों का संकेत कर जनता को आगाह करने का यत्न किया है।

'अन्धेरे के साथ' उपन्यास में मुस्लिम-समाज में व्याप्त धर्मान्धता के परिणाम स्वरूप नवयुवा के जीवन में उत्पन्न कष्ट और पीड़ा का यथार्थ एवं मार्मिक चित्रण किया है। मुस्लिम धर्मानुयायी उपन्यास के नायक को हिन्दू नागरिकों के विरूद्ध कार्य करनेका आदेश देता है। समाज की संकीर्ण धार्मिक मानसिकता के विरोध में लेखकने नयी उदारवादी चेतना का निरूपण किया है।

'महामहीम' उपन्यास में देश के समकालीन परिवेश का यथार्थ अंकन किया गया है। आज के सत्ता लोलुप राजनेता जनता की धार्मिक भावनाओं से खिलवाड़ करके अपना उल्लू सीधा करते हैं। उपन्यास में जटाधर शुक्ल का चरित्र ऐसे भ्रष्ट राजनेताओं का प्रतीक है जो पराजय के भय से हिन्दू-मुस्लिमों के बीच दंगे भड़काकर जनहित और राष्ट्र-हित विरोधी कार्य करते हैं।

इस प्रकार साठोत्तरी उपन्यासों में धार्मिक संकीर्णता और कट्टरता के दुष्परिणामों को दर्शाते हुए राष्ट्र के हित में हिन्दू-मुस्लिमों के पारस्परिक सद्भाव और एक्य की आवश्यकता को लक्षित किया गया है। राजनेताओं एवं कोमवादी तत्त्वों द्वारा देश में सम्प्रदायवाद का विष पुनः तीव्रता से फैलाया जा रहा है। उसके प्रति जनता को जागृत करके इस प्रवृत्ति को नष्ट करने की आवश्यकता पर बल दिया है। साठोत्तरी उपन्यासकार राष्ट्रीय चेतना की सुरक्षा के लिए चिन्तित होकर ही देश में धार्मिक सांमजस्य और उदारवादी दृष्टिकोण की आवश्यकता को निरूपित किया है। धार्मिक विद्वेष ने भारत-विभाजन जैसी दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति का निर्माण किया था जिससे आज भी लगातार भारत और पाकिस्तान परस्पर संघर्षरत है।देश का इतिहास साक्षी है कि देश की राजनीति के मूल में कहीं न कहीं धर्म भेद और जातिगत विद्वेष भी विद्यमान रहा है। वास्तव में धर्म को राजनीति पर हावी न होने देना आवश्यक है। वस्तुतः धार्मिक स्वतंत्रता और समन्वयात्मकता से ही साम्प्रदायिक समस्याओं का निराकरण सम्भव है। राष्ट्र के हितमें धार्मिक-संकिर्णता विहीन राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन का निर्माण होना जरूरी है।

भारतीय संस्कृति के मूलमें चारित्रिक विकास के लिए नैतिक मूल्यों की प्रधानता है। मानवतावादी दृष्टिकोण, उदात्त मनोवृत्तियाँ एवं भाईचारे की भावना द्वारा सामाजिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया गया है। लेकिन अंग्रेजी शासन के दरम्यान पाश्चात्य संस्कृति के निकटवर्ती प्रभाव के परिणाम स्वरूप हमारे जीवन-मूल्यों में बदलाव प्रारम्भ हो चुका है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात अंग्रेजी शिक्षा एवं पाश्चात्य संस्कृति ने जहाँ हमें वैज्ञानिक दृष्टि-कोण प्रदान किया, वहाँ हमारे परम्परागत जीवन-मूल्यों के प्रति उपेक्षा और आशंका का भाव भर दिया। परिणामस्वरूप हम अपने जीवन मूल्यों को भूलकर

पाश्चात्य अन्धानुकरण की आधुनिकता के मिथ्या भावबोध से गौरवाविन्त होते गये।तथाकथित आधुनिकता ने भोगवादी दृष्टिकोण को बढ़ावा देकर सांस्कृतिक पतन की ओर उन्मुख किया। 'काली आँधी' में नायिका मालती राजनीतिक सफलता की प्राप्ति की दौड़में अपने परिवार से कटकर रह जाती है। दूसरी ओर नदी फिर बह चली की अशिक्षित नायिका परबतिया पति को सुधारकर कर्तव्यपरायण बनाने का यत्न करती है। इतना ही नहीं अपितु पति की इच्छा के विरूद्ध आधुनिक वेष-सज्जा को न अपनाकर आदर्श भारतीय नारी की तरह मर्यादायुक्त जीवन जीती है। पति के जेल चले जाने पर स्वक्रेन्द्रित न होकर समाज के पिछड़े, गरीब लोगों की सेवा में जीवन समर्पण करती है। इस प्रकार गँवार अशिक्षित नारी अपने सांस्कृतिक मूल्यों द्वारा जीवन को सफल बनाती है। 'अन्धेरे बन्द कमरे ' की नायिका नीलिमा देश-विदेश की यात्रा करते हुए पति से अलग आधुनिक जीवन व्यतीत करती है। अंत में पुन:अपने पति की सेवा में उपस्थित होकर अपने सांस्कृतिक मूल्यों को अपनाती है।

'अपने लोग' और 'रागदरबारी' में लेखक शिक्षा के क्षेत्रमें व्याप्त भ्रष्टाचार और सांस्कृतिक पतन को दर्शाते है। इसके दूरगामी परिणाम का अनुमान, वर्तमानकालीन सांस्कृतिक पतन से लगाया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त सांस्कृतिक परिवेश की झाँकियाँ 'जल टूटता हुआ', 'अलग अलग वैतरणी', 'फिर नदी बह चली', 'लौटे हुए मुसाफिर' आदि में पाये जाते है। इनमें लोकसंस्कृति का परिचय मेला, पर्व, त्यौहार, लोकगीत आदि के संयोजन से हुआ है। एक प्रकार से भारत की शहरी एवं ग्रामीण जीवन में सांस्कृतिक संकट गहराया है तथापि इसके विशद चित्रण का आधुनिक उपन्यासों में अभाव पाया जाता है। देश की प्राचीन संस्कृति के पतन के प्रति लोगों को जागरूक करके उन्हें मार्गदर्शन देने का उत्तरदायित्व का निर्वाह समकालीन उपन्यासकारों ने यदि प्रभावशाली रूप से किया होता तो राष्ट्र की सेवा का सर्वोत्तम कार्य सिद्ध होता।

--: संदर्भ सूची :--

१) हेनरी जेम्स - दी आर्ट आफ फिक्शन - पृ. ३९३
२) आलोचना(श्रीपतराय का लेख) - ७ - पृ. ९६
३) नागी प्रचारिणी पत्रिका भाग - १५ - पृ. ५
४) राल्फ फाक्स - दि नावेल एण्ड दी पीपुल - पृ. २५
५) बाबू श्यामसुन्दरदास, साहित्यालोचक - पृ. १८०
६) डॉ. त्रिभुवनसिंह - हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद - पृ. ३
७) डॉ. रामविलास शर्मा - प्रेमचन्द और उनका युग - पृ. १५८
८) फणीश्वरनाथ रेणु - कितने चौराहे - पृ. ८८
९) वही - वही - पृ. १२२
१०) डॉ. चन्द्रभानु सोनवणे - कथाकार फणीश्वरनाथ रेणु - पृ. १७२
११) वही - वही - पृ. १५५
१२) भीष्म साहनी - तमस - पृ. १११
१३) वही - वही - पृ. ११८
१४) डॉ. रमाकांत शर्माजी के व्यक्तिगत पत्र से.
१५) राजेन्द्र यादव - अठारह उपन्यास - पृ. १६५
१६) भीष्म साहनी - 'तमस' - पृ. १११
१७) सम्पादक - डॉ०भीष्म साहनी,डॉ०रामजी मिश्र,भगवती प्रसाद विदारिया-आधुनिक हिन्दी उपन्यास- पृ.४३४
१८) वही - वही - पृ. ४३६
१९) डॉ. प्रेमकुमार - समकालीन हिन्दी कथा साहित्य - पृ. ११४
२०) वही - वही - पृ. ११४
२१) डॉ.अमर जायसवाल - हिंदी के बहुचर्चित उपन्यास और उपन्यासकार - पृ. १०५
२२) कमलेश्वर - लौटे हुए मुसाफिर - पृ. २७
२३) वही - वही - पृ. १०१
२४) डॉ. सुरेश सिन्हा - हिन्दी उपन्यास उद्‌भव और विकास - पृ. ५५८

२५) यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' - हज़ार घोड़ो का सवार - पृ. ३११
२६) वही - वही - पृ. ३१३
२७) वही - वही - पृ. ३१९
२८) वही - वही - पृ. ३४५
२९) वही - वही - पृ. ३६३/६४
३०) कृष्णकुमार बिस्सा 'चन्द्र' - साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना - पृ. ७२
३१) यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' - हज़ार घोड़ो का सवार - पृ. ३६३
३२) डॉ. देवेश ठाकुर - ब्लिट्ज (साप्ताहिक)
३३) कृष्णकुमार बिस्सा 'चन्द्र' - साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना -पृ.३८-३९
३४) श्रीलाल शुक्ल - रागदरबारी - पृ. ४५
३५) वही - वही -पृ.३१०/३११
३६) वही - वही - पृ.३२५
३७) वही - वही - पृ.३२९
३८) डॉ. चन्द्रकांत बांदिवडेकर - उपन्यासः स्थिति और गति - पृ.२८५
३९) कृष्णकुमार बिस्सा 'चन्द्र' - साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास में राजनीतिक चेतना - पृ. २१
४०) लक्ष्मीनारायण दूबे - मधुमती- अप्रैल ८२ - पृ. ४९
४१) सुभाषिनी शर्मा - स्वातंत्र्योत्तर आंचलिक उपन्यास - पृ. ३६
४२) कृष्णकुमार बिस्सा 'चन्द्र' - साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास में राजनीतिक चेतना - पृ. ३५
४३) मन्नू भण्डारी - महाभोज - पृ. ७७
४४) कृष्णकुमार बिस्सा'चन्द्र' - साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास में राजनीतिक चेतना - पृ. ६२
४५) डॉ. सुरेश बत्रा - हिन्दी उपन्यास : बदलते परिप्रेक्ष्य - पृ.१२०
४६) प्रदीप पंत - महामहिम - पृ. १३

४७) वही - वही - पृ. ६३
४८) वही - वही - पृ. ९१
४९) प्रदीप पंत - महामहिम - भूमिका - पृ. ०६
५०) कृष्णकुमार बिस्सा'चन्द्र' - साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास में राजनीतिक चेतना - पृ. ६९
५१) प्रदीप पंत - - महामहीम 'कवर के प्रथम फ्लेप से उद्धृत'
५२) कृष्णकुमार बिस्सा'चन्द्र' - साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास में राजनीतिक चेतना - पृ.१२९
५३) कमलेश्वर - काली आँधी - पृ. ०७
५४) वही - वही - पृ. ४०
५५) वही - वही - पृ.९१-९२
५६) कृष्णकुमार बिस्सा 'चन्द्र' - साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना - पृ. ३१
५७) वही - वही - पृ. ३१
५८) डॉ. अमर जायसवाल - हिन्दी के बहुचर्चित उपन्यास और उपन्यासकार - पृ. ४५
५९) श्रवणकुमार गोस्वामी - जंगलतंत्रम् - पृ. २१
६०) वही - वही - पृ. ५९
६१) डॉ. लक्ष्मीनारायण दुबे - समकालीन हिंदी उपन्यासों में राजनैतिक मनोविज्ञान के स्वर(मधुमती-अप्रैल ८३) - पृ.४२-४३
६२) कृष्णकुमार बिस्सा 'चन्द्र' - साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना - पृ. ३७
६३) बैजनाथ राय - समीक्षा- अक्टूबर - दिसम्बर १९८० - पृ. ३८
६४) कृष्णकुमार बिस्सा 'चन्द्र'- साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना- पृ. २४
६५) राजकृष्ण मिश्र - दारूल शफा - पृ. ७३
६६) कृष्णकुमार बिस्सा'चन्द्र'-साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना- पृ. ४०
६७) श्री लाल शुक्ल - दारूल शफा फ्लेप (कंवर) से अवतरित
६८) अमृतलाल नागर - दारूल शफा भूमिका - पृ. ०५
६९) यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र ' - एक और मुख्यमंत्री - पृ. ६७

७०) वही - वही - पृ. ८४
७१) डॉ. देवीप्रसाद गुप्त - उपन्यास के अन्तिम फ्लैप से उद्धृत
७२) डॉ. गोपालराय - शिविरा दस्तावेज-२ - पृ. ०८
७३) डॉ. राही मासूमरजा - कटरा बी आर्जू - पृ.१८४
७४) रामकुमार गौतम - उपन्यास के कवर से उद्धृत
७५) धीरेन्द्र अस्थाना - समय एक शब्द भर नहीं है - पृ. १७
७६) वही - वही - पृ. २४
७७) डॉ. देवेश ठाकुर - संचेतना - पृ. १३
७८) जगदीश चन्द्र - आधापुल - पृ.१७३
७९) वीणा - मासिक पत्रिका जून १९९९ - पृ. ३८
८०) वही - वही - पृ. ३८
८१) जगदीशचन्द्र - आधापुल - पृ.१८६
८२) उषा प्रियंवदा - पचपन खम्भे लाल दीवारें - पृ. ५६
८३) वही - वही - पृ. ७८
८४) वही - वही - पृ.१०४
८५) घनश्याम 'मधुप' - हिन्दी लघु उपन्यास - पृ.१७८
८६) 'पचपन खम्भे लाल दीवारें ' उपन्यास के कवर से उद्दत्
८७) वासुदेव जी शर्मा - हिन्दी के साठोत्तरी उपन्यासों में अंकित जीवन मूल्य (शोध ग्रन्थ से अवतरित) एम. एस. युनिवर्सिटी
८८) हिमांशु श्रीवास्तव - नदी फिर बह चली - पृ.
८९) वही - वही - पृ.
९०) वासुदेव जी शर्मा - हिन्दी के साठोत्तरी उपन्यासों में अंकित जीवन मूल्य (शोध ग्रन्थ से अवतरित) एम. एस. युनिवर्सिटी
९१) वासुदेव जी शर्मा - हिन्दी के साठोत्तरी उपन्यासों में अंकित जीवन मूल्य (शोध ग्रन्थ से अवतरित) एम. एस. युनिवर्सिटी
९२) डॉ. वी. विजयलक्ष्मी - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में नारी पात्रो में युग चेतना - पृ. ९३
९३) मोहन राकेश - अन्धेरे बन्द कमरे - पृ. २२८

९४) रामदरश मिश्र - हिन्दी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा - पृ. १५८
९५) डॉ. जगमोहन चोपड़ा - आधुनिक हिन्दी उपन्यास - पृ. १२८
९६) जगदीश चन्द्र - धरती धन न अपना - पृ. १६
९७) वही - वही - पृ. १५५
९८) वही - वही - पृ. १५५
९९) वही - वही - पृ. १५६
१००) 'धरती धन न अपना' उपन्यास के कवर से उद्दत
१०१) डॉ. बंसीधर - हिन्दी के आँचलिक उपन्यास: सिद्धांत और समीक्षा - पृ. २१३
१०२) डॉ. ज्ञानचन्द गुप्त - आँचलिक उपन्यास : सम्वेदना और शिल्प - पृ. ११२
१०३) मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. १०६
१०४) वही - वही - पृ.
१०५) रामदरश मिश्र - जल टूटता हुआ - पृ. १२
१०६) वही - वही - पृ. १२
१०७) वही - वही - पृ. १८३
१०८) वही - वही - पृ. ३५३
१०९) सुभाषिनी शर्मा - स्वातंत्र्योत्तर आँचलिक उपन्यास - पृ. १०८
११०) रामदरश मिश्र - जल टूटता हुआ - पृ. ३५३
१११) सुभाषिनी शर्मा - स्वातंत्र्योत्तर आँचलिक उपन्यास - पृ. ३१
११२) शिवप्रसाद सिंह - अलग-अलग वैतरणी - पृ. १८६
११३) वही - वही - पृ. २४८
११४) वही - वही - पृ. ६८५
११५) वही - वही - पृ. ६८६
११६) सुभाषिनी शर्मा - स्वातंत्र्योत्तर आँचलिक उपन्यास - पृ. १३४
११७) 'अलग-अलग वैतरणी' उपन्यास के कवर से उद्दत
११८) डॉ. गीता - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास - पृ. ६१
११९) रामदरश मिश्र - अपने लोग - पृ. १८४

MEHTA LIBRARY
University of Baroda

१२०) रामदरश मिश्र - अपने लोग - पृ. २४४
१२१) डॉ. ज्ञान अस्थाना - हिन्दी कथा साहित्य समकालीन सन्दर्भ - पृ. ६५
१२२) वार्षिक भारतीय साहित्य सर्वेक्षण - १९७६-७७
१२३) हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष -पृ.४०५
१२४) वही - वही -पृ.४०५
१२५) रामदरश मिश्र - अपने लोग -पृ.३६१
१२६) डॉ. प्रेम कुमार - समकालीन हिन्दी कथा-साहित्य -पृ.११४
१२७) रामदरश मिश्र - हिन्दी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा -पृ.१७८
१२८) इब्राहिम शरीफ - अन्धेरे के साथ -पृ. ३३
१२९) वही - वही -पृ.१००
१३०) गोपालराय - समीक्षा अंक - १३ जुलाई १९७० -पृ. ३
१३१) वामन राव अहिरे - हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना:एक सर्वेक्षण- (शोध ग्रंथ से अवतरित) एम.एस. युनिवर्सिटी
१३२) कृष्णकुमार बिस्सा 'चन्द्र' - साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना -पृ. ९७
१३३) वही - वही -पृ.९६-९७
१३४) मन्नू भण्डारी - महाभोज -पृ. ३६
१३५) हिन्दी - अनुशीलन - त्रैमासिक मुख पत्र - मार्च १९९८ -पृ. ७९
१३६) यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' - एक और मुख्यमंत्री -पृ. ८१
१३७) डॉ० रामकुमार वर्मा - तुलसीदास -पृ. ३७